चतुर्दश मनुओं का इतिहास

लेखक

डा० कुँवरलाल 'व्यासशिष्य'

इतिहासविद्याप्रकाशन, नाँगलोई

दिल्ली

(प्रकाशनवर्ष १६८८)

प्राक्कथन

इस लघु पुस्तक में, संम्भवत, व्यासके पाँच हजार वर्ष पश्चात्, चौदह मनुओं का कालक्रम सर्वप्रथम निश्चित करने का प्रयत्न किया गया है। यह सब 'परिवर्तयुग कालगणना' के उद्धार के कारण सम्भव हुआ है। स्वायम्भुव मनु इस वाराहकल्प (सृष्टि) के प्रथम मनुष्य थे और आगे के चार मनु— स्वारोचिष, उत्तम, तामस और रैवत—उनके ही निकट वंशज थे। इन सभी पाँच मनुओं मे कुछ शताब्दियो का कालान्तर था। तथाकथित भविष्य के दो मनु—रौच्य और भौत्य भी स्वायम्भुव मनु के निकट सम्बन्धी थे और इनमे भी कुछ शताब्दियो का अन्तर था। ये सातों मनु— प्रायः समकालिक थे और स्वायम्भुव मनु की प्रथम सहस्राब्दी में हो चुके थे— सूक्ष्म पुराण अनुशीलन से यही सिद्ध होता है। सभी चौदहमनु भूतकालिक मनुष्य थे।

केवल आठवें मनु—चाक्षुषमनु—स्वायम्भुवमनु से १२सहस्रवर्षपश्चात् ३५वे परिवर्तयुग में हुये। शेष छः मनु प्रायः समकालिक थे, वैवस्वत मनु और पाँच सावर्ण मनु आज से १३००० वि० पू० से १२००० वि०पू० पूर्व हुये—इनमें एक मनु—मेरु सावर्णी प्राचतेसदक्ष का पौत्र था, द्वितीय दक्षके जामाता धर्म प्रजापति का पुत्र था, तृतीय ब्रह्मसावर्णि स्वयं ब्रह्माकश्यप ही थे और चतुर्थ इन्द्रसावर्णि था, और पंचम सावर्णि विवस्वान् का पुत्र और वैवस्वतमनु का अनुज था, जो वैरोचन बलि दैत्येन्द्र के समकालिक था, ये सभी तथ्य पुराणो मे ही स्पष्ट लिखे हुये हैं। दे सब खोजें सर्वप्रथम मैंने की हैं, जिससे प्राग्महाभारतकालीन विश्व इतिहास प्रथमबार प्रकाशित हुआ है। बाइबिल से ज्ञात होता है स्वायम्भुव मनु (आदम) और वैवस्वतमनु (नूह) की आयु लगभग एक-एक सहस्रवर्ष थी। आशा है कि इतिहासज्ञ एवं इतिहासप्रेमी इन मौलिक खोजों का स्वागत करेंगे

दि० २३-१-१६८८ (वसन्तपंचमी),

लेखक

डा० कुँवरलाल व्यासशिष्य

विषयानुक्रमणी

अध्याय-प्रथम

(आदिकाल प्रजापतियुग)
आदिवंशो का क्रम

आदिकाल के आदिवंशो का प्राचीनतम पुराणो में संक्षिप्त विवरण मिलता है। वर्तमान पुराणों में यह विवरण इतना जटिल, संश्लिष्ट एवं संकीर्ण (मिश्रित) है कि उससे विश्लेषित, प्रत्यक्ष एवं निर्भ्रान्त परिणाम निकालना एक अत्यन्त जटिल या दुष्कर कार्य है। फिर भी हम अपनी बुद्धि, अध्यवसाय एवं योग्यतानुसार आदिकाल (प्रजापतियुग) के आदिवंशों[1] का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत करने एवं उनका कालक्रम निश्चित करने का प्रयत्न करेंगे।

चौदह मनुओं का क्रम और कालक्रम—यह पहिले ही संकेत कर चुके हैं कि वर्तमान पुराणों में यह पाठ पूर्णतः भ्रामक है कि स्वायाभुव मनु से वैवस्वतमनुपर्यन्त केवल सप्त मनु भूतकालीन हैं और सावर्णादि सप्त मनु भविष्य में होंगे। वर्तमानकाल में पुराणपाठों में इस प्रकार की अनेक बातें जुड गईं, जिनमें यह पाठ सर्वप्रथम और सर्वाधिक भ्रष्ट और भ्रामक है, अतः अनेक इतिहासकार इन सावर्णादि मनुओं को भविष्यकालिक समझकर, उनका इतिहास में उल्लेख करना ही छोड़ देते है।[2]

चौदह मनुओं में प्रारम्भिक चार (स्वारोचिष, उत्तम, तामस और रैवत मनु) प्रियव्रत के वंशज ही थे, अतः इनका क्रम पुराणों में उचितरूप से संनिविष्ट है—

स्वारोचिषश्चोत्तमोऽपि तामसो रैवतस्तथा।
प्रियव्रतान्वया ह्येते चत्वारो मनवः स्मृताः ॥[3]

---

१. पुराणेहि कथा दिव्या आदिवंशाश्च धीमताम् कथ्यन्ते ये पुरास्माभि : ··· (महा० १/५/२) ; आदिकाले हि···पुरुषा बभूवुरमितायुष : ···· (च० सं० ३/३१)

२. इन सब में सावर्णिवाले मन्वन्तर भविष्य से सम्बन्ध रखते हैं···· अतः इनका कथन अनावश्यक है···बुद्धपूर्व का भारतीय इतिहास, पृ० ७२ मिश्रबन्धुकृत

३. ब्रह्मांड० (१/२/३६/६५),

स्वायाम्भुव मनु के अनन्तर उसके वंशज प्रियव्रत के वंश में ये चार मनु—स्वारोचिष, उत्तम (या औत्तम), तामस और रैवत हुए और षष्ठ चाक्षुष मनु उत्तानपाद के पुत्र प्रसिद्ध लोकाधिपति ध्रुव के वंश में हुये जो आदिराज पृथु वैन्य के पूर्वज थे और इन्हीं के वंश में ही दक्षादि हुये। सप्तम प्रसिद्ध मनु वैवस्वत अर्थात् विवस्वान् के पुत्र थे और पाँच सावर्ण मनुओं में से एक थे, चार सावर्ण मनु वैवस्वत मनु के प्राय: समकालीन थे, अतः उपर्युक्त सभी मनुभूतकालीन पुरुष थे अतः इनका कालक्रम इस प्रकार था—

१. स्वायम्भुव मनु
२. स्वारोचिष मनु
३. उत्तम मनु
४. तामस मनु
५. रैवत मनु
६. रौच्य मनु
७. भौत्य मनु
८. चाक्षुषमनु
९. दक्ष या मेरुसावर्णिमनु
१०. ब्रह्मसावर्णि (कश्यप) मनु
११. धर्मसावर्णि सावर्णि मनु
१२. रुद्र सावर्णि मनु
१३. वैवस्वतमनु
१४. सावर्णमनु

रुचि प्रजापति पुलह के वंशज और कर्दम के पिता थे, जो चाक्षुषमनु से अनेक पीढ़ी पूर्व हुये, इसी प्रकार भूति के पुत्र भौत्यमनु, चाक्षुष मनु के पूर्ववर्ती थे। चारों सावर्णिमनु भी वैवस्वत मनु से पूर्ववर्ती थे अतः सभी तेरह मनु वैवस्वत मनु के पूर्ववर्ती थे और सर्वान्तिम मनु विवस्वान् के पुत्र ही थे। शेष समस्त मनु उनसे प्राचीनतर थे, इनका समय क्रमशः निर्णय करेंगे।

आदिम प्रजापतिगण—प्राचीनपुराणों (वायु और ब्रह्माण्ड) में प्राचीनतम द्वादश प्रजापतियों के नाम हैं—भृगु, अङ्गिरा, मरीचि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि, वसिष्ठ (नव ब्रह्माणः), रुचि, धर्म और नीललोहित (रुद्र) और त्रयोदश प्रजापति हुये स्वायम्भुव मनु। ये सभी त्रयोदश प्रजापति ब्रह्मा या स्वयम्भू के मानस सुत (पुत्र) कहे गये हैं। कही पुराणों में सात, कहीं, आठ, कहीं नौ, कहीं दश और

कहीं बारह और कहीं तेरह ब्रह्मा के मानसपुत्रों का कथन है । इनमें से अनेक किसी विशिष्ट प्रजापति के पुत्र कहे गये हैं, यथा रुचि को पुलह का पुत्र बताया गया है, धर्म को रुचि का पुत्र कहा गया है इसी प्रकार कर्दमादि के सम्बन्ध में विभिन्न कथन हैं । प्रतीत होता है कि जब किसी प्रजापति के पिता का नाम विस्मृत हो जाता था तब उसको ब्रह्मा का पुत्र बना दिया जाता था, यथा इक्ष्वाकु या पुरूरवा के अनेक वंशजों को ब्रह्मपुत्र बना दिया गया, यथा रामायण में आयु के वंशज (बलाकाश्व के वंशज) राजा कुश को ब्रह्मपुत्र[1] कहा गया है । इतिहासपुराणों में और भी इस प्रकार के बहुत उदाहरण दिये जा सकते हैं ।

स्वायम्भुव मनु के प्रसिद्ध पुत्र—प्रियव्रत और उत्तानपाद तथा दो कन्यायें थीं—आकूति तथा प्रसूति । प्रसूति आदिम दक्ष की पत्नी बनी और आकूति प्रजापति रुचि की पत्नी हुई । रुचि के पुत्र दक्षिणा और यज्ञ (मिथुनसन्तति) उत्पन्न हुए । यही पर पुराणपाठ कुछ भ्रामक हुआ है । यज्ञ के स्थान पर 'यम' पाठ होना चाहियें, क्योकि यम की पत्नी का नाम दक्षिणा था, अतः उसके पति को 'यज्ञ' बना दिया[2], इस प्रकार के अनेक भ्रम पुराणो बहुधा मिलते हैं ।

दक्ष द्वारा प्रसूति से 24 पुत्रिया उत्पन्न हुई, इनमें धर्मसंज्ञक प्रजापति का त्रयोदश कन्याओ के साथ विवाह हुआ, इनके तेरह कन्याओं के नाम थे—श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति' तुष्टि, पुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि लज्जा, वसु, शान्ति, सिद्धि और कीर्ति[3] । शेष एकादश पुत्रियों का विवाह निम्न महर्षियो के साथ हुआ—

सती + भव
ख्याति + भृगु
संभूति + मरीचि
स्मृति + अङ्गिरा
प्रीति + पुलस्त्य
क्षमा + पुलह
संतति + क्रतु
अनसूया + अत्रि
ऊर्जा + वसिष्ठ
स्वाहा + अग्नि
स्वधा + पितृ ।

---

१. ब्रह्मयोनिर्महानासीत् कुशो नाम महातपाः । (रामा० १/३२/१),
२. यमस्य पुत्रो यज्ञस्य तस्माद्यामास्तु ते स्मृताः (ब्रह्माण्ड १/२/६/४५)
३. तुलना कीजिये—कीर्ति श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधाधृतिक्षमा (गीता १०/३४).

इनमें से स्वधा और स्वाहा और उनके पति अग्नि और पितृ ऐतिहासिक व्यक्ति प्रतीत नहीं होते। परन्तु हैं ये ऐतिहासिक, भले ही पुराणपाठ में कुछ व्यभिचार किया गया हो। जिस प्रकार कीर्ति आदि गुण प्रतीत होते हैं उसी प्रकार श्रद्धा आदि के पुत्र काम, दर्प नियम, संतोष आदि मानसिक भाव प्रतीत होते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं कि यहाँ पुराणपाठों में कुछ न कुछ कल्पना से काम लिया है और ऐतिहासिक नामों को काल्पनिक भावादि से संमिश्रण कर दिया गया है, यह सब होते हुये भी अधिकांश ऐतिहासिक नामों को पहिचाना जा सकता है यथा महर्षियों की पत्नियाँ अनुसूया आदि मानसिक भावमात्र नहीं, स्त्रियाँ ही थीं। इसी प्रकार दक्षिणादि भी स्त्रियाँ थीं, क्योंकि दक्षिणादि के पुत्र यामादि देवगण थे।

भृगु—आदिम भृगु की सन्तति इस प्रकार वर्णित है—
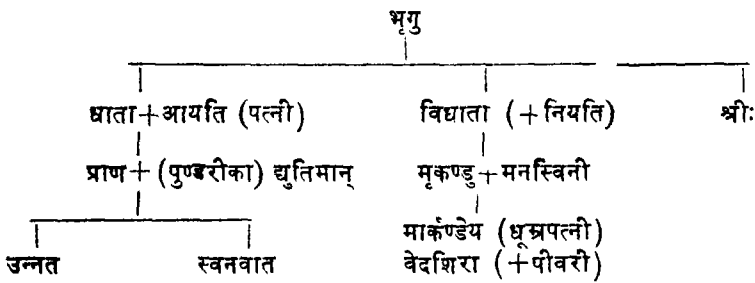
उपर्युक्त वंशावली में भृगु की पुत्री श्री या लक्ष्मी का नाम सम्मिलित करना अयुक्त एवं भ्रष्ठपाटत्व है, यह लक्ष्मी चाक्षुप या वैवस्वतमन्वन्तर के भृगु द्वितीय (वारुणि) की पुत्री थी, न कि आदिम भृगु की, क्योंकि जघन्यज (कनिष्ठ) आदित्य विष्णु का जन्म वैवस्वतमन्वन्तर के आदि या चाक्षुषमन्वन्तर के अन्त में हुआ था, क्योंकि वरुणादि आदित्य चाक्षुपमनु से क्या पृथु से भी बहुत उत्तरकालीन थे, प्राचेतसदक्षादि का पृथु पूर्वज था, पुन: प्राचतेसदक्ष और कश्यप का वंशज वरुण या भृगु और उनकी सन्तति स्वायम्भुवमन्वन्तर मे कैसे हो सकते हैं। विष्णु आयु में बहुत छोटे थे, क्योंकि वरुण, विष्णु के ज्येष्ठतम भ्राता थे, अतः वरुणपुत्र भृगु द्वितीय, विष्णु के भतीजे थे, जो उनके श्वसुर भी बने, अतः महर्षि भृगु विष्णु से अनेक पीढी पूर्व हुए, यद्यपि महर्षि उनके भतीजे थे। अतः देवयुग मे ज्येष्टत्व और कनिष्ठत्व या सनाभि विवाहादि पर कोई आपत्ति या विधान नही था, इसी प्रकार के अन्य उदाहरण भी देवयुग या उससे पूर्व मिलते हैं, तथा सोम, दक्ष प्राचेतस (द्वितीय) का जामाता था और श्वसुर भी[1] इन उदाहरणों से आदिकाल मे प्रजाओं विरलत्व एवं पुरुषों का दीर्घायुष्ट्व भी प्रमाणित होता है।

१. दौहित्रश्चैव सोमस्य कथं श्वसुरतां गतः।
ज्यैष्ठ्यं कानिष्ठ्यमप्येषां पूर्वं नासीज्जनाधिप॥ (हरि० १/३/५३/५६)

मरीचिवंश और महर्षि परमेष्ठी कश्यप—स्वायंभुव मनु और भृगु के अनन्तर मरीचि आदियुग के प्रधानपुरुष एवं प्रजापति थे, वरन् उनके वंशज (तथाकथितपुत्र) देवयुग के प्रधानतम वंशकर महर्षि कश्यप थे, जिनसे समस्त देवासुर एवं पंचजन[1] जातियाँ समुद्भूत हुई। मरीचि का वंशवृक्ष इस प्रकार उल्लिखित है—
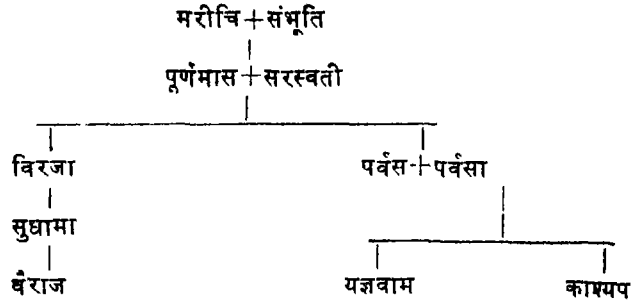
प्राचीनपुराणो में महर्षि कश्यप, प्रजापति मरीचि के साक्षात्पुत्र कहीं भी कथित नहीं है, केवल महाभारत[2], में इन्हें मरीचि का साक्षात् पुत्रकहा है। बृहद्देवता में उन्हें प्रजापति[3] मरीचि का पुत्र कहा है। पुत्र का अर्थ वंशज भी हो सकता है। पुराणपाठों में मरीचि के पुत्र साक्षात् कश्यप का उल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता। अतः कश्यप मरीचि के साक्षात् पुत्र नहीं वंशज थे, क्योंकि पुराणो मे स्पष्ट लिखा है कि इसमें केवल प्रधान वंशकरो का उल्लेखमात्र है, पूर्णवंशवृक्षो का नहीं, अतः कश्यप साक्षात् मरीचि के पुत्र नहीं, वंशज थे। स्वायाम्भुव मनु से दक्ष प्राचेतस तक ४५ पीढ़ियाँ कथित हैं और ये भी प्रधान-प्रधान पुरुष कथित है और यह अनुमान है कि स्वायम्भुव मनु से दक्ष प्राचेतसपर्यन्त ४३ परिवर्तयुग हो चुके थे, अतः स्वायम्भुव मनु के समकालीन प्रजापति मरीचि के कश्यप साक्षात् पुत्र नहीं हो सकते, जो प्राचेतस दक्ष के समकालीन और उनके जामाता थे। ऋषियों के दीर्घायुष्ट्व को स्वीकार करने पर भी मरीचि और कश्यप में न्यूनतम २५ पीढ़ियाँ अवश्य व्यतीत हुई होगी, क्योंकि दोनों के समय में न्यूनतम १६००० वर्ष का अन्तर है, मरीचि का समय २६००० वि० पू० और कश्यप का समय १४००० वि० पू० था। मरीचि के प्रत्येक वंशज की आयु १७०० वर्ष मानने पर भी न्यूनतम दस पीढ़ियाँ का अन्तर मरीचि से कश्यप पर्यन्त अवश्य होना चाहिए अधिक हो सकता है, न्यून नहीं और वर्तमान पुराणपाठों में भी कश्यप को मरीचि का साक्षात्पुत्र कही कहा नही गया। पर्वस के दो पुत्र यज्ञवाम और काश्यप कहे गये हैं। यहाँ 'काश्यप' पद भी विचारणीय है।

१. पंचजन=देव, असुर, नाग, सुपर्ण और गन्धर्व।
२. मरीचेः कश्यपपुत्रः (महा० १/६५/११)
३. मारीचः कश्यपो मुनिः (बृहद्दे० ५/१४३),

कश्यप या काश्यप एक गोत्रनाम है, कश्यप के प्रत्येक वंशज को कश्यप या काश्यप कह सकते हैं, आज भी अनेक कश्यपगोत्रीय पुरुष अपने को 'कश्यप' ही कहते हैं, अतः मूलकश्यप आदिमकश्यपदेवासुरपिता कश्यप से भी प्राचीनतर कोई प्राजापत्य मारीच कश्यप हो सकते है। हमारे इस मत की पुष्टि पुराणों के सप्तर्षिगण प्रकरण से होती है कि देवासुरजनक कश्यप का पूर्वज कोई अन्य कश्यप था, क्योंकि निम्न मन्वन्तरों में, जो वैवस्वत मन्वन्तर से पूर्वकालीन थे, निम्न काश्यप ऋषि हुये—

द्वितीय स्वारोचिष मन्वन्तर मे स्तम्ब काश्यप[1]
प्रथममेरुसावर्ण मन्वन्तर (नवम) मे वसु काश्यप[2]
दशम सावर्ण मन्वन्तर में नभोग काश्यप[3]
एकादश ,, ,, मे हविष्मान् काश्यप[4]
द्वादश ,, ,, मे तपस्वी काश्यप[5]
त्रयोदश रौच्य ,, मे निर्मोह काश्यप[6]

उपर्युक्त छः काश्यप ऋषि देवासुरजनक काश्यप (कश्यप) से पूर्ववर्ती या न्यूनतम समकालीन पुरुष थे, अतः सिद्ध है कि देवासुर पिता काश्यप आदिम या मूल कश्यप नहीं थे, देवासुरपिता कश्यप का नाम सभवत 'परमेष्ठी' काश्यप प्रजापति था— हरिवंशपुराण (1/3 अध्याय) मे इस कश्यप को सर्वत्र 'परमेष्ठी'[7] कहा गया है, अतः देवासुरजनक काश्यप मारीचि का नाम 'परमेष्ठी' था। और उनका मूलनाम कश्यप नही था। वे काश्यपगोत्रीय ब्राह्मण ही थे।

मारीच पूर्णमास का पुत्र विरजा एक महान् प्रजापति था, इसको महाभारत 12/57/88) में नारायण का मानसपुत्र कहा गया है,

ततः सचिन्त्य भगवान् देवो नारायणः प्रभु.।
तैजसं वै विरजसं सोऽसृजन्मानसं सुतम्॥

यहां विरजा को नारायण (विष्णु) का मानसपुत्र कहना एक कल्पनामात्र है, वस्तुतः

---

१. हरिवंश (१/७/१२) २. हरिवंश (१/७/६६)
३. हरिवंश (१/७/६६) ४. ,, (१/७/७०)
५. ,, (१/७/७५) ६. ,, (१/७/७९)
७. यं कश्यपः सुतवरं परमेष्ठी व्यजीजनत् (हरिवंश १/३/६)
पूर्वं स हि समुत्पन्नो नारदः परमेष्ठिना। (हरि० १/३/१०)
ततोदक्षस्तु तां प्रादात् कन्यां वै परमेष्ठिने (हरि० १/३/१४)
ततोऽभिसंधि चक्रुस्ते दक्षस्तु परमेष्ठिना (हरि० १/३/१३)

विरजा मरीचि के पौत्र और पूर्णमास के पुत्र से। इन्हीं विरजावंश में पूर्वदिशा के दिग्पाल राजा सुधन्वा हुये।[१] आगे विरजा का वंशवृक्ष इस प्रकार कथित है—

कर्दमनाम के अनेक पुरुष हुए थे, एक कर्दम रुचि के वंश में हुये, एक पुलस्त्य के वंश में और एक पुलह के वंश में—

(1) कर्दमस्य तु पत्नी पौलहस्य प्रजापतेः। (ब्रह्माण्ड० 1/2/10/23)

(2) क्षमा तु सुषुवे पुत्रान् पुलस्त्यस्य प्रजापतेः। कर्दमश्च॥ (1/2/10/31)

भागवतपुराण (4/1) में स्वायम्भुवमनु शतरूपा की तीन कन्यायें कथित हैं—आकूति, देवहूति और प्रसूति। ब्रह्माडादि प्राचीनपुराणपाठों में आकूति और प्रसूति ही स्वायम्भुवमनु की कन्यायें बताई गई है, देवहूति का नाम नहीं। भगवद्दत्त[२] ने महाभारत के उक्त श्लोक (12/57) में कर्दम के दो पुत्र बताये है—अनंग और कपिल। जब कि वहा पर एकमात्र पुत्र अनंग का उल्लेख है। अतः कर्दम के पैत्रक उद्भव के के विषय में पर्याप्त मतमतान्तर है अथवा अनेक कर्दम थे। अत. पुराणों के पाठों में शुद्धिकरण की महती आवश्यकता है। भागवत में देवहूति के पति कर्दम कहे गए है। भागवत का वर्णन कितना प्रामाणिक है या नहीं, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

भागवतपुराण (4/1/13) में मरीचि की पत्नी का नाम संभूति के स्थान पर कला है, जिसके दो पुत्र हुये—कश्यप और पूर्णिमान।[३] यह 'कला' कर्दम की पुत्री बताई गई है। पूर्णिमान के पुत्र हुये विरज और विश्वग और पुत्री देवकुल्या। यह संभव है कि भागवत का वर्णन सत्य हो और उपर्युक्त कश्यप मरीचि के साक्षात्पुत्र

---

१. पूर्वस्यां दिशि पुत्रं वैराजस्य प्रजापतेः। दिशापालं सुधन्वानं राजानम् (हरि १/४/१८)

२. भा. वृ. इ. भाग २ (पृ० ४२) ३. भागवत (४/१/१०),

हों, जिनके वंश में अनेक कश्यप हुये हों और इन्हीं कश्यप के सुदूर वंशज देवासुर जनक 'परमेष्ठी, कश्यप हों। अत: मरीचिपुत्र कश्यप और परमेष्ठी कश्यप मे अनेक पीढ़ियों का अन्तर होना चाहिए।

आदिम अङ्गिरा—आदिम अङ्गिरा मरीच्यादि और स्वायम्भुवमनु के समकालीन ३००००, वि० पू० के ऋषि थे, इन्हीके किन्ही वंशजों ने आदिराज पृथुवैन्य का अभिषेक किया था।[१] बृहस्पति आंगिरस पृथुवैन्य और दक्षादि से भी वहुत उत्तरकालीन ऋषि थे, जो देवयुग (चतुर्थ परिवर्तयुग १३००० वि० पू०) में हुए। अतः आदिम अङ्गिरा और बृहस्पति आङ्गिरस में लगभग १७००० वर्षों का अन्तर था। आदिम अङ्गिरा बृहस्पति के साक्षात् पिता कदापि नही हो सकते। उन दोनो में में अनेक पीढ़ियों का अन्तर था। बृहस्पति, अङ्गिरावशीय होने के कारण ही आङ्गिरस कहे जाते थे।

आदिम अङ्गिरा के प्रारम्भिक वंशज थे—
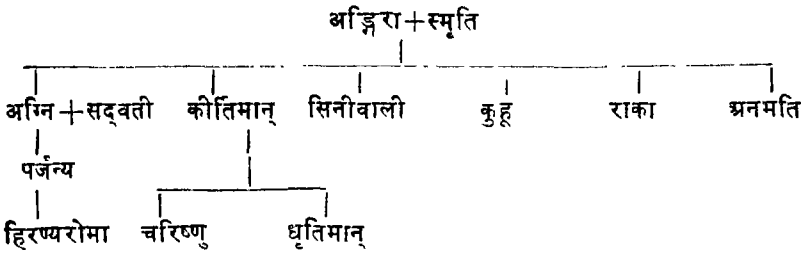
सिनीवाली आदि नाम अमावस्या आदि के भी होते हैं, अतः ऐसे नामों से भ्रान्ति होना स्वाभाविक है, परन्तु उपर्युक्त नाम निश्चय ही स्त्रियो के हैं, चन्द्र-कलाओ से इनका कोई सम्बन्ध नहीं।

उत्तरदिशा मे पर्जन्य प्रजापति के पुत्र हिरण्यरोमा का राज्य था।[२] चरिष्णु और धृतिमान् आङ्गिरसो के शतसहस्रश: वंशज हुए, जो सभी आङ्गिरस कहे जाते थे।[३]

अग्नि एक आङ्गिरस ऋषि का नाम था, न कि कोई भौतिकवस्तु। अग्नि और अङ्गिरा का एक ही कुल था, जिसका इतिहासपुराणों मे बहुधा उल्लेख मिलता है।

---

१. सोऽभिषिक्तो महाराजो देवैरगिर:सुतैः। आदिराजो महाराज: पृथुवैन्यः प्रताप वान् ॥ (वायु० ६२/१३६),

२. तथा हिरण्यरोमाणं पर्जन्यस्य प्रजापतेः। उदीच्यां दिशि दुर्धर्षं राजानं सोऽभ्य षेचयत्। (हरि० १/४/२१)

३. तयोः पुत्राश्च पौत्राश्च अतीता वै सहस्रशः। (ब्रह्माण्ड० १/२/१०/२१)

आदिम प्रजापति अत्रि—आदिम प्रजापति अत्रि स्वायम्भुवमनुपुत्र उत्तानपाद के संरक्षक थे—

उत्तानपादं जग्राह पुत्रमत्रिः प्रजापतिः।
दत्तकः स तु पुत्रो राजा ह्यासीत् प्रजापतिः।
स्वायम्भुवेन मनुना दत्तोऽत्रेः कारणं प्रति ॥[1]

अतः उत्तानपाद अत्रि के दत्तकपुत्र थे, जो मनु द्वारा किसी कारण उन्हें दे दिये गये। अनुसूया आदिम अत्रि की पत्नी थी, उत्तरकालीन अत्रियों से अनुसूया का सम्बन्ध जोड़ना सर्वथा काल्पनिक है, यथा दाशरथि राम के समकालीन कोई अत्रि वंशी आत्रेय को भी रामायण मे अत्रि कहा गया है और उनकी पत्नी को अनूसूया—

तं चापि भगवानत्रिः पुत्रवत् प्रत्यपद्यत।
अनसूयां महाभागां तापसीं धर्मचारिणीम्।[2]

मूलरामायण (वाल्मीकीयरामायण प्रथम अध्याय) में भी अनसूया सीतासंवाद का संकेत न होने से यह संवाद पूर्णतः काल्पनिक सिद्ध होता है। आदिम अत्रि, (अनसूयापति) और दाशरथि राम में 24000 (चौबीस सहस्र) वर्षों का अन्तर था, इस दृष्टि से भी यह संवाद अनैतिहासिक सिद्ध होता है।

आदिम अत्रि के आदिमपुत्र या वंशज थे—सत्यनेत्र, हव्य, आपोमूर्ति, शनैश्चर और सोम। ये पांचों यामदेवों के समकालीन थे।[3] सोम एक वंश का नाम था, क्योंकि बुधपिता सोम और आदिम सोम भी एक नही हो सकते। क्योंकि बुध सोमायन और आदिम अत्रि मे भी न्यूनतम 15000 सहस्रवर्षों का अन्तर था, अतः सोम भी एक वंश का नाम था। आदिम सोम से दक्ष की 27 कन्याओं का विवाह हुआ, जिनके नाम पर 27 नक्षत्रों के नाम पड़े। ये सोमपत्नी दक्षकन्यायें उत्तरकालीन प्राचेतस दक्ष की पुत्रियाँ थी,[4] अतः दक्षजामाता और श्वसुर सोम अत्रि का साक्षात् पुत्र न होकर वंशज ही था।

कुछ पुराणों में अत्रि के साक्षात् पुत्र बताये गये हैं—दत्तात्रेय, दुर्वासा और सोम।[5] ये तीनों ही आदिम अत्रि के पुत्र न होकर सुदूर वंशज थे, जो अत्रि या

---

१. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/८४/८५)
२. रामा० (२/११७/५, ८)
३. यामदेवैःसहातीता पंचात्रेयाः प्रकीर्तिताः। ब्रह्माण्ड० (१/२/तु०/२४),
४. या राजन् सोमपत्न्यस्तु दक्षः प्राचेतसो ददौ। सर्वा नक्षत्रनाम्न्यस्ता ज्यौतिषे परिकीर्तिताः ॥ (हरि० १/३/३६);
५. अनसूया तथैवात्रेर्जज्ञे निष्कलमषान् सुतान्।
सोमं दुर्वाससं दत्तात्रेयं च योगिनम् ॥ (विष्णु० १/१०/६)

आत्रेय कहे जाते थे, ऐसे ही एक अत्रि (अत्रिवंशज) का उल्लेख वैदिकग्रन्थों (बृहद्देवतादि) में है, यह अत्रि अर्चनाना कहा गया है—वहाँ पर अत्रि का स्पष्टतः नाम अर्चनाना है, अत्रिपुत्र का अर्थ है अत्रिवंशज—

श्यावाश्वश्चात्रिपुत्रस्य पुत्रः खल्वर्चनानसः ।[1] अर्चनाना को अत्रि कहना और श्यावाश्व को आत्रेय कहने से स्पष्ट है कि किसी भी अत्रिवंशज को 'अत्रि' या 'आत्रेय' कहा जाता था और इससे आदिम अत्रि का भी भ्रम होता था, यह भ्रम सभी गोत्र प्रवर्तक ऋषियो के साथ था, यथा वसिष्ठ (वासिष्ठ) अगस्त्य (आगस्त्य =अगस्ति), विश्वामित्र (वैश्वामित्र—कौशिक), कश्यप (काश्यप) इत्यादि ।

आदिम अत्रि की एक कन्या थी—श्रुति[2], जो पुलहपुत्र कर्दम की पत्नी थी, जिसका पुत्र हुआ शंखपद, जो दक्षिणदिशा का दिक्पाल था ।[3] शंखपद आदि सभी आदिम प्रजापति थे, जिनका समय परमेष्ठी काश्यप से सोलह सहस्रवर्षपूर्व था ।

आदिम पुलस्त्य प्रजापति—आदिम पुलस्त्य और विश्रवा के पिता और कुबेर या रावण के पितामह पुलस्त्य में लगभग २२००० सहस्रवर्षों का अन्तर था । यक्षराक्षसों के पितामह पुलस्त्य ५००० वि. पू. हुए अतः दोनो पुलस्त्यों के एक होने का प्रश्न ही उत्पन्न नही होता । इसी प्रकार एक पुलस्त्य महाभारतकाल से कुछ शतीपूर्व हुये, जो पराशर (पाराशर्य) और भीष्मपितामह के गुरु थे । इस द्वापरयुगीन पुलस्त्य ने किसी पाराशर को विष्णुपुराण सुनाया था ।[4] अतः पुलस्त्य के वंशज भी सहस्त्रोवर्षों के अनन्तर भी 'पुलस्त्य' ही कहलाते थे ।

आदिम प्रजापति पुलस्त्य की पत्नी प्रीति से तीन पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई । पुत्र थे—दत्तोलि, देवबाहु, और अत्रिकन्या का नाम था—सद्वती । यह सद्वती अग्नि की पत्नी और पर्जन्य प्रजापति की माता थी, पर्जन्य का पुत्र हिरण्यरोमा दिक्पाल हुआ, जिसका उल्लेख पूर्वपृष्ठों पर किया जा चुका है ।

पुलस्त्यपुत्र 'दत्तोलि' को पूर्वजन्म का 'अगस्त्य' कहा गया है,[5] दत्तोलि के सभी वंशज पौलस्त्य या पुलस्त्य कहलाये—

---

१. बृहद्देवता (५/५२)

२. कन्या चैव श्रुतिर्नाम माता शंखपदस्य सा । कर्दमस्तु पत्नी सा पौलहस्य प्रजापतेः ।। (ब्रह्माण्ड० (१/२/१०/२२)

३. दक्षिणस्यां महात्मानं कर्दमस्य प्रजापतेः पुत्रं शंखपदं नाम राजानं सोऽभ्यषेचयत् । (हरि० १/४/६/२०),

४. पुलस्त्यवरदानेन ममाप्येतत्स्मृतिं गतम् ।। विष्णु० ६/८/४६,

५. पूर्वजन्मनि सोऽगस्त्यः स्मृतः स्वायम्भुवेऽन्तरे ।। (१/२/१०/२६),

दत्तोलेः सुषुवे पत्नी सुजंघी च बहून् सुतान् ।

पौलस्त्या इति विख्याताः स्मृताः स्वायम्भुवेऽन्तरे । (ब्रह्मांड० 1/2/10/29)
दत्तोलि को पूर्वजन्म का अगस्त्य कहने का कारण था कि यक्षराक्षसों के पितामह पुलस्त्य, राजा तृणविन्दु (वैशाल) और अगस्त्य, रामायणकाल से पूर्व साथी थे, जिन्होंने लवणाम्भस् समुद्र को पार करके सुदूरद्वीपो की यात्रायें की थी। इसका इतिहासपुराणो में संकेत है ।

पुलहवंश—प्रतीत होता है कि पुलस्त्य और क्रतु के वंशज भारतवर्ष में कम रहे, बाह्यदेशों मे उपनिवेश बसाकर अधिक बसे। कुबेर और रावण के उदाहरण प्रत्यक्ष हैं, इसलिए और इनके पूर्वज पौलस्त्यो (यक्षराक्षसो) ने दक्षिणपूर्वीद्वीप समूहों में आस्ट्रेलियापर्यन्त तथा उत्तर में हिमालयप्रदेश (कैलाशपर्वत), (लंका-तिब्बत) एवं अफ्रीका मे उपनिवेश बसाये। इन देशो की कृष्णवर्णप्रजा (हब्सी, पिग्मी आदि) पुलस्त्य एलं पुलह के वंशज हैं। इसी कारण प्राचीनभारतीय इतिहास में पुलह और वक्ष्यमाण प्रजापति क्रतु के वंशजो का नामशेष भी नहीं मिलता। आज भारतीयब्राह्मणों में पुलस्त्य, पुलह और क्रतुगोत्र के ब्राह्मण कहीं भी नहीं मिलते, इसका प्रमुख कारण हैं कि इन प्रजापतियों के वंशज बाह्यदेशों में उपनिविष्ट होकर वहां की प्रजा बन गये।

पुलह की पत्नी क्षमा से तीन पुत्र उत्पन्न हुए—कर्दम, उर्वरीयान् और सहिष्णु। आत्रेयी श्रुति से कर्दम के पुत्र शंखपद और पुत्री कम्या हुई।

प्रजापतिकर्दम—पुलह के पुत्र कर्दम आदिमप्रधानप्रजापतियों से एक थे।[1] इनकी पुत्री काम्या का विवाह स्वायम्भुवमनुपुत्र प्रियव्रत से हुआ। वर्तमान पुराणपाठो मे पर्याप्त अशुद्धियाँ है, कहीं कर्दम को पुलस्त्य का पुत्र बताया है, कहीं विरजा का। यह भी संभव है कि प्रजापति विरजा का पुत्र कर्दम अन्य व्यक्ति हो। आदिम कर्दम पौलह के ही पुत्र कपिल थे, भागवतपुराण में कर्दम की पत्नी देवहूति बताई गई है, जो स्वायम्भुवमनु की पुत्री कही गई है, भागवतपु० का यह वर्णन, अप्रमाणिक और असत्य है। कर्दम की पत्नी का नाम श्रुति था, जो अत्रि की पुत्री थी, इनके पुत्र प्रजापति शंखपद हुये।[2] सहिष्णु का पुत्र कनकपीठ और पुत्री पीवरी। कनकपीठ की पत्नी यशोधरा से कामदेव उत्पन्न हुआ।

क्रतुसन्तति बालखिल्य—क्रतु की पत्नी सन्तति थी, जिनके पुत्र साठसहस्र बालखिल्य कहे गये हैं, ये वस्तुतः इनके वंशज होंगे। इनकी यवीयसी पुत्रियाँ पुण्या और सत्यवती पूर्णमास (मारीच) की पुत्रवधुयें थी, इनके पति का नाम संभवत सुधन्वा था।

---

१. पूर्वकाले महाबाहो ये प्रजापतयोऽभवन् ।
कर्दमः प्रथमस्तेषाम्···॥ (रामा० ३/१३/६,७),

२. स वै श्रीमाँल्लोकपालः प्रजापतिः (ब्रह्माण्ड० १/२/१०/३३)

वशिष्ठ—पुराणो में सर्वाधिक भ्रम वसिष्ठ गोत्र के सम्बन्ध में है। आदिकाल से कलिपर्यन्त इतिहास में लाखों वसिष्ठ ब्राह्मण हुये हैं जिनको एक समझना महान् भ्रम ही नहीं महामूर्खता भी है। इस भ्रम का कारण है कि वसिष्ठ के वंशजों का यथार्थ नाम न लेकर अथवा वंशपरिचायक नाम 'वाशिष्ठ' न कहकर 'वसिष्ठ' ही कहना।

पुराणो में ही दो प्रमुख वसिष्ठों का उल्लेख है, प्रथम स्वायम्भुववसिष्ठ और द्वितीय मैत्रावरुणिवशिष्ठ जो प्रायः वरुण के पुत्र कहे जाते हैं। इन दोनो में भी प्रायः सोलह सहस्रवर्षों का अन्तर था। आदिमवसिष्ठ २६००० वि० पू० हुये तो द्वितीय वसिष्ठ मैत्रावरुणि १३००० वि० पू० हुये। आदिमवसिष्ठ के अनेक वंशज १४ मन्वन्तरों के सप्तर्षियों में सम्मिलित थे, यथा उदाहरण द्रष्टव्य है—

मन्वन्तर		सप्तऋषियों में वशिष्ठ ऋषि
स्वायम्भुव में स्वयं		आदि वसिष्ठ
स्वारोचिष में		और्व वाशिष्ठ
औत्तम मे		सप्त वासिष्ठ (सप्तर्षि)[1]
रोहित (मेरुसावर्ण) में		सावन वासिष्ठ
दक्षसावर्णि	में	अष्टमसंज्ञक वासिष्ठ
रूद्रसावर्णि	,,	अनघ वासिष्ठ
सावर्णि	,,	द्युति वसिष्ठ
रौच्य	,,	सुतपा वासिष्ठ
भौत्य	,,	शुक्र वासिष्ठ

उपर्युक्त सभी सप्तर्षि वासिष्ठ मैत्रावरुणि वसिष्ठ से पूर्ववर्ती वसिष्ठ थे। पूर्वमन्वन्तरो के समान वैवस्वत मन्वन्तर (अन्तिम) में मैत्रावरुणि के अनेक वंशज वासिष्ठ न कहलाकर वसिष्ठ कहलाते थे। यही भ्रम का मूल कारण है।

वैवस्वतमन्वन्तर में भी साक्षात् मैत्रावरुणि वसिष्ठ सप्तऋषियो में सम्मिलित नहीं थे, जैसा कि अधिकांश पुराणपाठों में आभास होता है। विश्वामित्र, जो स्वयं सप्तर्षियों के अन्तर्गत थे। शेष छः ऋषि वसिष्ठादि के वंशज थे, नकि वे स्वयं वंशकर ऋषि—

---

१. वसिष्ठपुत्राः सप्तासन् वासिष्ठा इति विश्रुताः। (हरि० १/७/१७)

२. अत्रिर्वसिष्ठो भगवान् कश्यपश्च महानृषिः। गौतमोऽथ भरद्वाजो विश्वामित्रस्तथैव च सप्तमो जमदग्निश्च ॥ (हरि० १/७/३४)

गाधिजः कौशिको धीमान् विश्वामित्रो महातपाः ।।
भार्गवो जमदग्निश्च और्वपुत्रः प्रतापवान्
बृहस्पतिसुतश्चापि भरद्वाजो महायशाः ।
चतुर्थो गोतमो विद्वाञ्छरद्वान्नाम धार्मिकः ।
स्वायम्भुवोऽत्रिर्भगवान् ब्रह्मकोशः स पंचमः ।
षष्ठो वसिष्ठपुत्रस्तु वसुमाँल्लोकविश्रुतः ।

वत्सरः काश्यपश्चैवसप्तैते साधुसम्मताः ।। (ब्रह्मांड० १/२/३३/२६ २६)
हरिवंश के पाठ में केवल वसिष्ठ और कश्यप पाठ है, परन्तु प्राचीनपाठ (ब्रह्माण्ड पु०) के अनुसार वसिष्ठपुत्र वसुमान् और वत्सार काश्यप सप्तर्षियो में सम्मिलित थे, स्पष्ट है किस प्रकार कालान्तर में गोत्रनामो से मूलगोत्रप्रवर्तको का भ्रम होता गया। अतः वैवस्वतमन्वन्तर के सप्तर्षि मैत्रावरुणि वसिष्ठ और परमेष्ठी कश्यप न होकर इन दोनो के कोई वंशज (क्रमश. वसुमान् और वत्सर) ही सप्तर्षियों में से थे।

काठकसंहिता (३४/१७/२५) और मैत्रायणीसंहिता में एक वासिष्ठ सात्यहव्य का उल्लेख है, स्पष्ट है यह वासिष्ठ (वशिष्टवंशज) 'सत्यहवि' का पुत्र था जिसको 'सात्यहव्य' कहते थे।

पार्जीटर[1] ने इक्ष्वाकुवंशीय राजाओ के पुरोहित दशाधिक वसिष्टो (वासिष्ठो) का अनुमान किया है, उनके नाम क्रमशः देवराज वसिष्ठ, आपव वसिष्ठ, अथर्वनिधि वसिष्ठ, ब्रह्मकोष वसिष्ठ इत्यादि थे। महाभारतयुग मे भी अनेक वासिष्ठ ब्राह्मण ऋषि प्रसिद्ध थे। एक वासिष्ठ रोमहर्षणसूत का शिष्य था।[1] जिसका नाम मित्रयु वासिष्ठ था।[2] अतः निश्चय ही वसिष्टवंशज अनेकवशिष्ठ थे, जिनका विशेषवर्णन 'वासिष्ठ' प्रकरण मे किया जायेगा। वही पर पाराशर्य के पूर्वज वसिष्ठ का विवेचन होगा।

उपर्युक्त विवेचन का मन्तव्य यह है कि जो लोग एक ही सनातन वसिष्ठ को मानते हैं उनकी आंखें खुल जाँय कि वसिष्ठ या वासिष्ठ अनेक थे और उनके पृथक् पृथक् नाम भी थे, परन्तु कालान्तर में वे केवल एक वसिष्ठ ही सनातन और एक मात्र समझे जाने लगे।

---

१. एइहिट्रे० अध्याय 28 शीर्षक वासिष्ठ. पृ० २०३-२१७,

२. वसिष्ठो मित्रयुश्च (वायु० ६/५६), जै० ब्रा० में एक जीत वासिष्ठ का उल्लेख है।

स्वायम्भुवमनु समकालिक वसिष्ठ प्रथम (२६००० वि० पू०) से ऊर्जा से सातपुत्र स्वारोचिषमनु के समकालीन सप्तर्षि हुये, उनके नाम थे—रजः, उर्ध्वबाहु, सवन, पवन, सुतपा, शंकु और गर्त. वसिष्ठ की ज्येष्ठ पुत्री थी पुण्डरीका। रज वासिष्ठ से मार्कण्डेयी ने केतुमान् को उत्पन्न किया जो पश्चिमीदिशा का प्रमुख प्रशासक (दिक्पाल) था।[1] उत्तरकाल (चाक्षुषमन्वन्तर के अन्त) में मैत्रावरुणिवसिष्ठ के पिता वरुण (१२००० वि० पू०) इन्हीं पश्चिमीदेशों के प्रधान शासक हुये और जिनके वंशज गन्धर्वों और असुरों ने ईरान, ईराक आदि अरबदेशो और योरोप में चिरकालतक शासन किया।

आदिम भृगु के पौत्रप्राण की पत्नी महिषी वासिष्ठी पुण्डरीका थी, जिसका पुत्र हुआ द्युतिमान्।[2]

उपर्युक्त भृग्वादि सप्तर्षि द्वितीय जन्म में आदिम वरुण के पुत्र हुये, वैवस्वत मन्वन्तर में, इस विषय का विवेचन सप्तर्षिप्रकरण में किया जायेगा।

रुचि—ये आदिम द्वादश प्रजापतियों में एक थे। स्वायम्भुवमनु की पुत्री आकूति इनकी पत्नी थी, जिनके दो पुत्र हुये—यज्ञ (यम) और दक्षिणा। यज्ञद्वारा दक्षिणा पत्नी से द्वादश यामनाम के देव उत्पन्न हुये[3] इन्हीं को भागवतपुराण[4] में तुपितानाम के देव कहा है, जो स्वारोचिष मन्वन्तर के द्वादश देव कहे गये है, इनके नाम थे—तोष, प्रतोष, संतोष, भद्र, शान्ति, इडस्पति, इध्म, कवि. विभु, स्वह, सुदेव, रोचन और द्विषट्। तथ्य यह है कि स्वायम्भुव और स्वारोचिषमनुओं मे मध्य में कुछ शताब्दियों का अन्तर था, अतः यामसंज्ञक द्वादशदेव और तुषितसंज्ञक द्वादशदेव या तो एक ही थे, अथवा पृथक्-पृथक् भी हो तो प्रायः समकालीन ही थे।

रुचिप्रजापति का पुत्र या वंशज ही रौच्यमनु हुआ, जिसको पुराणों मे भविष्य का चतुर्दश (चौदहवां) मनु बताया है। वास्तव में रौच्यमनु, स्वायम्भुवमनु के अनन्तर कुछ शती पश्चात् होने वाले स्वारोचिष मनु के समकालीन था। रौच्य मनु और स्वारोचिष मनु का समय अधिक से अधिक, स्वायम्भुव मनु के एक सहस्राब्दी पश्चात् ३०००० या २६००० वि० पू० समझना चाहिए।

धर्मप्रजापतिवंश—धर्म की आदिम द्वादश प्रजापतियों में यत्र-तत्र गणना है। वस्तुतः धर्म और नीललोहित महादेव प्राचेतसदक्ष के समकालीन प्रजापति थे, क्योंकि

---

१. पश्चिमायां दिशि तथा रजसः पुत्रमच्युतम्। केतुमन्तं महात्मानं राजानं सोऽभ्यषेचयत्। (हरि० १/४/२०,

२. ब्रह्माण्ड० १/२/१०/४८),

३. हरिवंश (१/७/६)—यामा नाम ते देवा आसन् स्वायम्भुवेऽन्तरे।

४. तुषिता नाम ते देवा स्वायम्भुवेऽन्तरे (भाग० ४/१/८)

दक्षप्राचेतस ने ही धर्मप्रजापति को अपनी दश कन्याएं प्रदान की थीं—अतः दक्ष, और महादेव का समय कृतयुग के आदि और प्रजापतियुग के अन्त में अथवा देवयुग के प्रारम्भ में था, १५०००-१४००० वि० पू० के मध्य में। आदिम दक्ष (स्वायम्भुव) और प्राचेतसदक्ष के समय पें न्यूनतम सोलह सहस्राब्दी का कालान्तर था।

धर्म की दश पत्नियां थीं—अरुन्धती, वसु, यामी, लम्बा, भानु, मरुत्वती, संकल्पा, मुहूर्ता, साध्या और विश्वा। इनमें धर्मपत्नी साध्या से साध्यगण[1] उत्पन्न हुए, जिनके नाम थे—मन, अनुमन्ता, प्राण, नर, अपान वित्ति, नय हय, हंस, नारायण, विभु और प्रभु।

धर्म की द्वितीयपत्नी वसु मे आठ वसु उत्पन्न हुए—आप, सोम, ध्रुव, धर, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। आप के पुत्र हुए वैतण्ड्य, श्रम, शान्त, अरो मुनि। ध्रुव का पुत्र हुआ काल, धर के पुत्र द्रविण, हुतहव्य, रज, सोमपुत्र वर्चा, बुध, धर, उर्मि, कलिल, धर की दूसरी पत्नी मनोहरा से शिशिर, प्राण और रमण, अनिलपुत्रमनोजव और अविज्ञातगति और चतुर्थांश तेज से स्कन्द सनत्कुमार (कार्तिकेय)। प्रत्यूष का पुत्र हुआ देवल और देवल के पुत्र—क्षमावान् व तपस्वी। अष्टम वसु प्रभास की भार्या थी आङ्गिरसी भुवना—बृहस्पति की भगिनी। इस तथ्य से भी सिद्ध है कि वसु, बृहस्पति, धर्म, साध्यदेव महादेव, स्कन्द, दक्षप्राचेतस, कश्यपपरमेष्ठी आदि सभी समकालीन (१४००० वि०पू०) थे। भुवना का पुत्र हुआ विश्वकर्मा भौवन[2] जिसके यज्ञ परमेष्ठी काश्यप ने करवाये थे। इस विश्वकर्मा का शिल्पविद्या से कोई सम्बन्ध नहीं था जैसा कि त्वाष्ट्र विश्वकर्मा मयासुर का था।

---

१. ऋग्वेदपुरुषसूक्त (101) में साध्यों का उल्लेख—"ये पूर्वे सन्ति साध्या देवाः।', इन्होने यज्ञसंस्था का प्रवर्तन किया था।

देवयुग में साध्यों की उसी प्रकार उपासना होती थी, जिस प्रकार रामायण महाभारत में विष्णु की पूजा। पुत्रकामना से देवमाता अदिति ने साध्यो की उपासना की थी—' अदितिः पुत्रकामाः साध्येभ्यो ब्रह्मौदनमपचत्' (तै. सं. ६/५/६/१), साध्यावै नाम देवा आसन् पूर्वेभ्यो देवेभ्यस्तेषां न किंचनस्वमासीत् (काठक० २६/७/१८) साध्या वै नाम देवा आसंस्ते सर्वेण यज्ञेन सह स्वर्गं लोकमायन् (ताण्ड्यब्रा० ८/४/१)

२. कश्यपो विश्वकर्माणं भौवनमभिषिषेच—मेध्येनेजे भूर्हि जगावित्युदाहरन्ति—न मां मर्त्य कश्चन दातुमर्हति विश्वकर्मन्। भौवन ! मां दिदासिथ निमङ्क्ष्येऽहं सलिलस्य मध्ये, मोघस्ते एव कश्यपाय संगरः।" (ऐ० ब्रा० ८/३/३)

धर्म की पत्नी विश्वदेवा से दश विश्वेदेव उत्पन्न हुए—क्रतु, दक्ष, श्रवः, सत्य, काल, काम, मुनि, पुरूरवा, माद्रवस और रोचमान।

अन्य पत्नियों के ऐतिहासिकपुत्रों को ज्योतिष के मुहूर्त आदि से सम्बन्धित कर दिया गया है जिससे उनकी ऐतिहासिकता प्रणष्ट हो गयी है।

नारायण ऋषि (प्रमुख साध्यदेव) : देवयुग में विष्णु को और द्वापरान्त में श्रीकृष्ण वासुदेव को नारायण का अवतार माना जाता था। श्रीकृष्ण और अर्जुन को नारायण और उनके पुत्र नर का अवतार माना जाता था।

नारायण ऋग्वेद १०/६० सूक्त के ऋषि हैं। शतपथब्राह्मण (१३/६/१/१) के अनुसार सर्वप्रथम नारायण ने पुरुषमेध पंचरात्रयज्ञ का दर्शन और अनुष्ठान किया— 'पुरुषो ह नारायणोऽकामयत अतितिष्ठेयं·· स तं पुरुषमेधं पंचरात्रं यज्ञक्रतुमपश्यत् तमाहरत।'' महाभारत के नारायणीयोपाख्यान[१] नाम वृहदुपाख्यान में नारायणधर्म (भक्तिधर्म) का विस्तार से कथन है। तदनुसार सर्वप्रथम नारायण ने रुद्र को परास्त किया। नारद ने श्वेतद्वीप में जाकर नरनारायण के दर्शन किये, इत्यादि वर्णन हैं। नरनारायण का आश्रम बद्रीनाथ (बदर्याश्रम) हिमालय पर था, उन्होंने कृतयुग में बदर्याश्रम में घोर तपस्या की। उनका कनकमय अष्टचक्र मनोरम शकटयान था।[१] नारद ने पांचरात्रधर्म राजावसु को सुनाया था। मरीच्यादि के वंशज चित्राशिखण्डीसंज्ञक सप्तर्षियों[२] ने पांचरात्रसंहिता (लक्षश्लोकात्मक)[३] की रचना की थी। जिसका उपदेश सप्तर्षियों को सर्वप्रथम नारायण ने किया था।[४] शतपथब्राह्मण (१३/६/१/१) से इसकी पुष्टि होती है कि पांचरात्रधर्म का प्रवर्तन नारायणपुरुष ने किया। नारायण को ही पुरुष या पुरुषोत्तम कहा जाता था।

अतः साध्यदेव नारायण पुरुषोत्तम, रुद्रमहादेव, नारद, बृहस्पति राजावसु, एक, द्वित और त्रित सभी समकालिक थे। इनका समय कृतयुग के आदि या देवयुग में (१२००० वि० पू०) था। नारायण ने अपने-अपने तपोबल से दम्भोद्भव नामक राजा का विनाश किया था, इसका संकेत कौटल्यअर्थशास्त्र[५] और महाभारत में है। अतः नारायणसाध्य पूर्वदेवयुग के एक प्रधानपुरुष या पुरुषोत्तम थे।

---

१. कृतेयुगे महाराज स्वायम्भुवेऽन्तरे। नरो नारायणश्चैव हरिः कृष्णः स्वयम्भुवः। (महा० १२/३३४/६)

२. ये हि ते ऋषयः ख्याताः सप्त चित्रशिखण्डिनः। (महा० २३/५५/२७)

३. कृतं शतसहस्राणां हि श्लोकानामिदमुत्तमम् (महा० १२/३३५/३६),

४. ऋषीनुवाच तान् सर्वानदृश्यः पुरुषोत्तमः। (महा० १२/३३५/३८)

५. मदाद्दम्भोद्भवः (अर्थ० १/१/६)

नीललोहित रुद्र—यद्यपि पुराणों मे नीललोहित रुद्र को स्वयम्भू का मानस पुत्र बताया गया है,[1] परन्तु रुद्रमहादेव प्रथमदक्ष (स्वायम्भुव) के समय (२६००० वि० पू०) नही थे, वे प्राचेतसदक्ष (१५००० वि० पू०) के जामाता थे। पुराणों में इस प्रकार के अनेक भ्रष्ट एवं या अस्तव्यस्त पाठ परिवर्तित हो गये हैं, अतः उनमें संशोधन अनिवार्य है। नीललोहित रुद्र से अनेकविध एवं भयंकर प्रजा की उत्पत्ति हुई। उनकी सन्तानो में पिंगल, निषंग, कपर्दी, नीललोहित, विशिख, हीनकेश, अन्धे, कपाली, महारूप, विरूप, विश्वरूप, स्थूलशीर्ष, नष्टशीर्ष द्विजिह, त्रिलोचन, अन्नाद, दिशिवासन, अतिमेढ्काय शितिकंठ, नीलग्रीव पुरुष उत्पन्न हुये, परन्तु ऐसी प्रजा की अधिक वृद्धि नहीं हुई।[2]

पुराणों में रुद्र के प्रारम्भिक नाम ये मिलते हैं—नीललोहित, रुद्र, भव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम और उग्र, महादेव के ये आठ नाम थे।

पुराणो के अनुसार कश्यप परमेष्ठी प्रजापति ने अपनी पत्नी सुरभि से एकादश रुद्रो को उत्पन्न किया,[3] जिनके नाम थे--हर, बहुरूप, जनक, अपराजित, वृषारुचि, शम्भु, कपर्दी, रैवत, मृगव्याध, सूर्य और कपाली। इस तथ्य से भी सिद्ध होता है कि महादेव रुद्र परमेष्ठी काश्यप से उत्तरकालीन और उनकी सन्तान थे, उनको आदिम प्रजापतियों मे सम्मिलित करना अनथ्य है।

आचार्य चतुरसेन ने धर्म की सन्तानों में रुद्र को माना है—

धर्म + दक्षपुत्री वसु
साध्यगण (नारायणादि)
|
धर
|
रुद्र (त्र्यम्बकादि एकादश)[4]

द्वादश देवासुरसंग्रामो मे सप्तम देवासुर संग्राम[5] के प्रमुखनायक स्थाणु रुद्र या महादेव शिव थे। तारक असुरेन्द्र के तीन पुत्रों[6] ताराक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली ने अफ्रीका (वर्तमान त्रिपोली) में त्रिपुरो का निर्माण कराया था, वे तीनो पुर क्रमशः

---

१. अभिनानात्मक रुद्रं निर्ममे नीललोहितम्। (ब्रह्माण्ड० १/२/६/२३
२. मा स्राक्षीदृशीप्रजाः (ब्रह्माण्ड० १/२/६/७६)
३. सुरभी कश्यपाद् रुद्रानेकादश विनिर्ममे। (हरि० १/३/४६),
४. भारतीयसंस्कृति का इतिहास, प्रारम्भ,
५. सप्तमस्त्रैपुरः स्मृतः (वायु०)
६. ताराक्षः कमलाक्षश्च विद्युन्माली च पार्थिव। (कर्णपर्व ३३/५),

आकाश अन्तरिक्ष और भूमि पर उपनिविष्ट थे। इन त्रिपुरों का निर्माण शिल्पाचार्य मयासुर ने किया था।[1] तारकाक्षसुत हरिसंज्ञक असुरेन्द्र ने अपने काञ्चनपुर में एक वापी का निर्माण कराया था, जिससे मृत असुर जीवित हो जाते थे।[2] वापी में स्नान करने पर मृत असुर पूर्ववत् जीवित हो जाते थे।

एक समय तक सभवत आदित्य देवो का उत्कर्ष नही हुआ था। यह त्रैपर युद्ध जलप्लावन से पूर्व चतुर्थ परिवर्तयुग १२५००० में लड़ा गया था। सोमादि देवो ने प्रार्थना करके शिव से नेतृत्व करने का आग्रह किया और विजयार्थ एक अद्भुतरथ का निर्माण कराया। कृत्तिवासा धूम्रवर्ण नीललोहित ने त्रैपुरयुद्ध में असुरों का वध करके त्रिपुरो का नाश किया एवं विजय प्राप्त की।

स्कन्द=कुमार=सनत्कुमार=कार्तिकेय—महादेव शिव के पुत्र के ये अनेक नाम थे—स्कन्द, कुमार षण्मुख कार्तिकेय, वैशाख, नैगमेय इत्यादि।[3]

सनत्कुमार नारद के गुरु थे, इन्होने देवर्षि को ब्रह्मविद्या प्रदान की, इससे निश्चित होता कि सनत्कुमार का जन्म देवयुग के पूर्व भाग (१४००० वि० पू०) मे हुआ था। स्कन्द षण्मुख का पालन कृत्तिकासंज्ञक छः देवपत्नियों ने किया था, अतः उनका नाम कार्त्तिकेय या षण्मुख हुआ। युद्ध मे विजयार्थ देवो ने रुद्रसुत स्कन्द का सैनापत्यपद पर विशेषरूप से अभिषेक किया।[4] उनका अभिषेक कश्यपादि देवर्षियों ने किया था। महायुद्ध में स्कन्द ने पूर्वोक्त त्रिपुरों के पूर्वज तारकासुर का वध किया था, अतः तारकामयदेवासुरयुद्ध त्रैपुरयुद्ध से पूर्व लड़ा गया, इसको पुराणों में पंचम देवासुरसंग्राम कहा गया है।

स्कन्द को कुछ विद्वान् ब्रह्मपुत्र, कुछ पुराण महेश्वरसुत और कुछ अग्निपुत्र कहते थे, यह विवाद[5] महाभारतयुग से पूर्व ही था, अतः इनके पैतृकवंश का यथार्थ निर्णय करना एक विषम समस्या है। हरिवश (१/३/४१) में स्कन्द सनत्कुमार को धर्मप्रजापति के पुत्र वसु के पुत्र अनल (अग्नि) का पुत्र कहा गया है—

> अग्निपुत्रः कुमारस्तु शरस्तंबे श्रियान्वितः।
> शाख, विशाख और नैगमेय इनके अनुज गये है—
> तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजाः॥

---

१. कर्णपर्व (३३/१७-१८)

२. ससृजे तत्रवापी तां मृतानां जीवनी प्रभो। कर्ण० ३३/३०

३. तं स्कन्दइत्याचक्षते (छा० ५) उपससाद सनत्कुमारं नारदः (छा० उ० ७/१/१),

४. द्र० महा० शल्यपर्व (४५ अध्याय),

५. केचिदेनं व्यवस्यन्ति पितामहसुतं प्रभुम्। सनत्कुमारं सर्वेषां ब्रह्मयोनिं तमग्रजम्। केचिन्महेश्वरसुतं केचित् पुत्रं विभावसोः॥ (शल्यपर्व ४६/९८-९९)

स्कन्द को महिषासुर का हन्ता बताया गया है।[1] यह महिषासुर वही है जिसका वध, मार्कण्डेयपुराण के अनुसार दुर्गा ने किया तो यह भी विवाद का विषय हो जाता है, परन्तु इससे स्कन्द और देवी का समय सावर्णिमनु के समकालिक सिद्ध होता है। पांच सावर्णमनु प्राचेतसदक्ष के दौहित्र थे, अतः समकालिक थे, अतः इनका समय षष्ठ परिवर्तयुग (१२००० वि० पू०) निश्चित होता है।

इस प्रबन्ध में घटनाओं का विस्तृत उल्लेख नहीं किया जायेगा केवल वंशक्रम एवं तिथिक्रम निश्चित करने में जिन घटनाओं या इतिवृत का उल्लेख अनिवार्य है, केवल उन्हीं का संकेत किया जायेगा।

अब वैवस्वत मनु के पूर्ववर्ती १३ मनुओं का वंशक्रम एवं तिथिक्रम क्रमशः निश्चित किया जायेगा।

स्वायम्भुवमनुवंशवृक्ष

स्वायम्भुव मनु का समय प्राचेतस दक्ष से ४३ परिवर्तयुग=१६००० वर्ष-पूर्व था, अतः स्वायम्भुवमनु का समय न्यूनतम २६००० वि० पू० था। इस समय से पूर्व सूर्यदाह[2] और तदनन्तर जलप्लावन हुआ। सूर्यदाह से पृथ्वी के पृष्ठ पर स्थित समस्त स्थावरजंगम (जीव, वनस्पति आदि) जलकर भस्म हो गये, ताप का केवल भूपृष्ठ[3] के आवरण पर विशेष प्रभाव पड़ा, परन्तु पर्वतों की गुहाओं एवं पृथ्वीगर्भ मे अनेक चिन्ह प्राप्त हुए हैं, जिससे सिद्ध होता है, कुछ किलोमीटर (३ या ४ कि०) पर्यन्त ही सूर्यताप का अधिक प्रभाव पड़ा। योरोप और अफ्रीका और अमरीका की पर्वतकन्दराओं में विशालकाय डायनासोर जीवों के भित्तिचित्र मिले हैं, जो पांच से सात करोडवर्षपूर्व तक के अनुमानित किये गये है, पोलैंड की एक कोयले की खान में पाँचकरोड़वर्षपूर्व का एक पादप मिला है, और भी ऐसे अनेक चिन्ह प्राप्त हुए हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि अनेक बार सूर्यताप एवं अनेक जलप्रलयो से पूर्व पृथ्वी पर अनेक बार मानवीसृष्टि हुई थी। सूर्यदाह एवं जलप्रलय कितने समय पर्यन्त रही, इसका अनुमान लगाना कठिन है परन्तु एक उत्सर्पिणीकाल (२१००० वर्ष) अवश्य रही होगी, जैसा जैनग्रन्थों में संकेत है। सूर्यताप एवं जलप्रलय दोनों का सम्मिलित योगकाल ४२००० वर्ष होना चाहिए। सूर्यताप के अनन्तर वराहसंज्ञक विशाल मेघ ने पृथ्वी पर अनेक शताब्दियो पर्यन्त घनघोर वर्षा की। इन वराहमेघ

---

१. शल्यपर्व (४६/७४) तथा वनपर्व २३१/६६)
२. वायुपुराण अध्याय ७, एवं ब्रह्माण्डपुराण, पूर्वभाग पंचमअध्याय,
३. ततः प्रलीने सर्वस्मिन् स्थावरे जङ्गमे तथा। अकाष्ठा निस्तृणा भूमिर्दृश्यते कूर्मपृष्टवत्॥ (महा/२/२३६/४) ददाह भगवान् वह्निर्भूतानीव युगक्षेय। द्रोणपर्व १५७/१३४),

(या ब्रह्मा) का उल्लेख वैदिक एवं पौराणिकग्रन्थों में इस प्रकार है—

शतं महिषान् क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम् ।[1] "शतश महान् मेघों ने क्षीर (जल) को पकाने और भूमि को आर्द्र करने पृथ्वी को घेर लिया।"

स प्रजापतिर्वराहो भूत्वा उपन्यमज्जत्[2]

'स वराहो रूपं कृत्वोपन्यमज्जत् । स पृथ्वीमध आच्छंत् ।[3]

'स वराह (मेघ) बनकर स्वयम्भू प्रजापति नीचे तक डूबा और पृथ्वी को बाहर निकाला।"

इस वराहमेघ प्रजापति का स्पष्ट वर्णन वायुपुराण में है—

ब्रह्मा तु सलिले तस्मिन् वायुर्भूत्वा तदाचरन् ।
स तु रूपं वराहस्य कृत्वाऽपः प्राविशत् प्रभु. ।।
अद्भिः, संछादितामुर्वीं समीक्ष्याथ प्रजापतिः ।
उद्धृत्योर्वीमथाद्भ्यस्तु अपस्तासु स विन्यसन् ।।[4]

"ब्रह्मा वायु (मेघ) रूप में आकाश मे विचरने लगा, वह वराहमेघ का रूप बनाकर सलिलों (आपों=गैसो) में प्रवेश कर गया और जल से आवृतभूमि को जल से बाहर निकाला।"

इस वराहमेघ की वर्षा के बिना न तो भूमि का उद्धार होता और न पृथ्वी पर जीवोत्पत्ति संभव थी अतः यह वराह ब्रह्मा चराचर बीजों का स्रष्टा था। प्रथम वनस्पति (उद्भिद्) सृष्टि हुई तदनन्तर स्वयंभू ब्रह्मा दश विश्वस्रजों दक्षादि के साथ उत्पन्न हुआ।[5]

जीवोत्पत्ति में उतना करोड़ोंवर्षों का समय नहीं लगा, जैसा कि विकासवादी कल्पना करते हैं, समस्त वनस्पति एवं जीव (प्राणि) सृष्टि शीघ्र कुछ वर्षों में हो गयी और जो वृक्ष, पशु, पक्षी या मनुष्य जिसरूप में आज हैं, उसी रूप में उत्पन्न हुये और प्रारम्भ में बीजमात्र उत्पन्न हुआ।[6]

१। ऋ० (८/७७/१०),
२. काठकसं० (८/२)
३. तै० ब्रा० (१/१/३/६)
४. वायुपुराण (८/२,७,८)
५. ततः समभवद्ब्रह्मा स्वयंभूर्दैवतैः सह। असृजच्च जगतत्सर्वं सह पुत्रैः कृतात्मभिः ।। (रामा० ३/११०/३-४),
६. बीजमात्रं पुरासृष्टम् (शान्ति० १८४/१५)

सर्वप्रथम मनुष्य स्वयम्भू ब्रह्मा उत्पन्न हुआ जो आकाश (अन्तरिक्ष) में उत्पन्न होकर पृथ्वी पर स्थित हो गया।[१]

स्वयंभू ब्रह्मा ने अपने शरीर को पुरुष और स्त्री के रूप में दोभागों में विभक्त किया, जो क्रमशः स्वायम्भुव मनु और शतरूपा कहलाये—

स्वां तनुं स तदा ब्रह्मा समपोहत भास्वराम्।
द्विधा कृत्वा स्वयं देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत्
अर्धेन नारी सा तस्य शतरूपा व्यजायत्।
स वै स्वायम्भुव; पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते ॥[२]

इसी स्वायम्भुव मनु को बाइबिल में आदम और उसकी पत्नीशतरूपा को 'हौवा' कहा गया है।

स्वायम्भुव मनु को ही "वैराज" पुरुष कहते हैं।
पुराणपाठों मे कहीं-कही प्रियव्रत और उत्तानपाद को स्वायम्भुवमनु का पौत्र बताया गया है, परन्तु यह पाठ भ्रामक ही है। ये दोनो मनु के पुत्र ही थे।

प्रियव्रतपुत्रों द्वारा पृथ्वीनिवेशन—कर्दम प्रजापति की पुत्री काम्या का विवाह प्रियव्रत के साथ हुआ, जिनसे दो पुत्रियां और दश पुत्र उत्पन्न हुये—पुत्रियों के नाम थे—सम्राट और कुक्षि। पुत्रों के नाम थे—आग्नीध्र, अग्निबाहु, मेध, मेधातिथि, वसु, ज्योतिष्मान् द्युतिमान् हव्य, सवन। मन्वन्तरवर्णन मे पुराणकार इन्हें स्वायम्भुव के पुत्र कहते हैं।[३] वस्तुतः ये मनु के पौत्र ही थे, पुत्र नही—

प्रियव्रतस्य पुत्रैस्तैः पौत्रैः स्वायम्भुवश्च ॥ (ब्रह्माण्ड० १/२/१४/६)
ससमुद्रावसुमती प्रतिवर्ष निवेशिता ॥ (ब्रह्माण्ड० १/२/१४/५)

प्रियव्रत ने अपने सातपुत्रों को सात महाद्वीपो का अधिपति नियुक्त किया, वे थे—

(१) आग्नीध्र — जम्बूद्वीप
(२) मेधातिथि — प्लक्षद्वीप
(३) वपुष्मान् — शाल्मलिद्वीप
(४) ज्योतिष्मान् — कुशद्वीप
(५) धृतिमान् — क्रौन्चद्वीप
(६) भव्य — शाकद्वीप
(७) सवन — पुष्करद्वीप

---

१. भूतानां ब्रह्मा प्रथमोत जज्ञे (अथर्व० १८/२२/५१)
आकाशप्रभवो ब्रह्मा (रामा० २/११०/५),

२. ब्रह्माण्डपु० (१/२/६/३२, ३६)
शरीरादर्धमथो भार्यां समुत्पादिवाञ्छुभाम्। (हरि० ३/१४/२२)

३. मनोः स्वायम्भुवस्यैते दशपुत्रा महौजसः ॥ (हरि० १/७/११),

इस समय उपर्युक्त जम्बूद्वीपादि सप्त महाद्वीपों की ठीक-ठीक पहिचान एक कठिन समस्या है, यद्यपि कुछ महाद्वीपों की पहिचान सही बताई जासकती है, यथा जम्बूद्वीप दक्षिणीपूर्वीएशिया का प्राचीन नाम था, जिसमें जम्बूवृक्ष की प्रधानता की, कुशद्वीप अफ्रीका का प्राचीन नाम था, पुराणों मे नीलनदी एवं अन्य ऐतिहासिक चिह्नो से इसकी पहिचान हो चुकी है, शाल्मलिद्वीप पश्चिमी एशिया के इराक आदि देशो की संज्ञा थी। कुछ लोग शाकद्वीप शकगणजातियो के आधार पर ईरान और मध्यएशिया को मानते हैं तो कुछ विद्वान पूर्वीद्वीपसमूह को, क्योकि वहीं पर साखू (शाक) के पेड़ अधिक पाये जाये जाते हैं।

सभी द्वीपों की पहिचान आज हो भी नही सकती, क्योकि स्वायम्भुवमनु के समय भूलोक पर महाद्वीपों और समुद्रो की जो स्थिति थी, वह आज नहीं है, क्योकि पृथ्वीतल पर अनेक द्वीप, पर्वत, नदी आदि समुद्र में डूब चुके है और अनेक नये द्वीपादि बन गये है। किसी युग में अन्तार्कतिकद्वीप (दक्षिणीध्रुव) मे पेड़पौधे उगते थे, पशु और मानव विचरण करते थे, वहा डायनासौर के चित्र गुफाओ में मिले हैं, वहां कोयले की खाने भी विद्यमान हैं, पृथ्वी के प्राचीनमानचित्र (जो पीरी ईस के पुस्तकालय से प्राप्त हुआ) से सिद्ध होता है कि उस समय अंतार्कटिक महाद्वीप पर हिम नही था। इस मानचित्र के निर्माता मयजाति के आन्तरिक्षयात्री माने जाते हैं, इसका संकेत डेनीकेन ने अपनी पुस्तक 'चेरियट्स आफगॉडस्' में किया है।

पुराणों के सप्तपातालों मे एक अतल (महाद्वीप) पाताल का उल्लेख है, जहां नमुचि, महानाद, शंकुकर्ण, कबन्ध, निष्कुलाद, धनंजय आदि असुरों के नगर (पुर) बसे हुये थे। इसी 'अतल' को प्राचीन यूरोपवासी (यूनानी आदि) 'अटलांटिक' महाद्वीप कहते थे। प्रसिद्ध ग्रीक दार्शनिक प्लेटो ने अपने ग्रन्थ 'डायलोगज' में अटलां-टिक (अतल) महाद्वीप के समुद्र में डूबने के वर्णन किया है, यह घटना वैवस्वतमनु के समय (१२००० वि० पु०) जलप्रलयकाल मे सभव है या उसके बाद की हो सकती है, परन्तु इससे पूर्व 'अतल' महाद्वीप जो योरोप और अमेरिका के मध्य मे (जहा आज अटलाटिक महासागर है) था और यद्यपि असुरो की नगरियाँ वहाँ थी, अतः आज उपर्युक्त सात महाद्वीपो (प्लाक्षादि) की ठीक-ठीक पहिचान एक दुःस्वप्न मात्र है। प्रियव्रतपुत्रहव्य या भव्य के सातपुत्रो के नामपर शाकद्वीप के सातवर्ष (देश) प्रथित हुये—जलदवर्ष, कुमारवर्ष, सुकुमारवर्ष, मणीवकवर्ष, कुमुदवर्ष मोदकवर्ष और महाद्रुमवर्ष।

द्युतिमान् ने सातपुत्रो के नाम पर क्रौंचद्वीप के सातवर्ष प्रसिद्ध हुए—कुशल, मनुग,, उष्ण, पावन, अंधकारक, मुनि और दुन्दुभिसंज्ञकवर्ष।

ज्योतिष्मान् के सातपुत्रों के नाम पर कुशद्वीप के सातजनपद प्रसिद्ध हुये—उद्भिद्, वेणुमाण, वैरथ, लवण धृति, प्रभाकर और कपिल।

वपुष्मान् के सात पुत्रों के नाम पर शालमलिद्वीप के सात देश थे—श्वेत, हरित, सुहरित, जीमूत, रोहित, वैद्युत, मानस और सुप्रभ।

मेधातिथि के सात पुत्रों के नाम पर प्लक्षद्वीप के सातदेश विख्यात हुये—ज्येष्ठ, शांतमय, शिशिर, सुखोदय, नन्द, शिव, क्षेमक और ध्रुव।

पुष्करद्वीप में सवन के दो पुत्रों के नाम पर केवल महाखण्ड प्रसिद्ध हुये—धातकिखण्ड और महावीतखण्ड। जम्बूद्वीप मे आग्नीध्र के सात पुत्रों के नाम पर निम्न सात वर्ष प्रसिद्ध हुए—नाभि (हिम) वर्ष, किंपुरुष या हेमकूटवर्ष, हरिवर्ष या नैषधवर्ष, सुमेरु या इलावृतवर्ष, रम्यवर्ष या नीलवर्ष, हिरण्यवान् या श्वेतवर्ष, श्रृंगवान् या उत्तरकुरुवर्ष, माल्यवान् या भद्राश्ववर्ष, केतुमाल या गन्धमादनवर्ष।

जम्बूद्वीप के नौभाग हुये और उनके दो दो नाम होने के कारण है कि देश पर्वत के नाम पर भी प्रसिद्ध हुआ जैसे हिमालय के नाम पर हिमवर्ष और आग्नीध्रपुत्र नाभि के नाम पर नाभिवर्ष, पुनः नाभि के पौत्र के नाम पर इस वर्ष का नाम भारतवर्ष प्रथित हुआ जो आज भी इसी नाम से जगत्प्रसिद्ध है। हरिवर्ष को तुर्किस्तान, इलावृत को पामीर (मेरुपर्वत) रम्यक को चीनीतातार, हिरण्यवान् को मंगोलिया, उत्तरकुरु को साइबेरिया, भद्राश्व को चीन और केतुमाल को वंक्षुप्रदेश (ईरान) कहते हैं।

प्रियव्रतवंशवृक्ष

१. स्वायम्भुव मनु=वैराजपुरुष	१३. उन्नेता
२. प्रियव्रत	१४. भूमा
३. आग्नीध्र	१५. उद्गीथ
४. नाभि	१६. प्रस्तावि
५. ऋषभ	१७. विभु
६. भरत	१८. पृथु
७. सुमति	१९. नक्त
८. तेजस	२०. गय
९. इन्द्रद्युम्न	२१. नर
१०. परमेष्ठी	२२. विराट्
११. प्रतीहार	२३. महावीर्य
१२. प्रतिहर्ता	२४. धीमान्

१. द्र० ब्रह्माण्डपुराण, प्रथमभाग अनुषंगपाद, अध्याय १३-१५,

२५. महान्
२६. भौवन
२७. त्वष्टा
२८. विरजा
२९. रजा
३०. शतजित्
३१. विश्वज्योति[1] आदि शतपुत्र या सैंकड़ों वंशज।

उपयुक्त वंशावली में नाभि, ऋषभ, भरत और सुमति के अतिरिक्त अन्य किसी राजा के विषय में किसी घटनाक्रम का संकेत नही प्राप्त होता।

राजा नाभि (या अजनाभ) की पत्नी मेरुदेवी से ऋषभदेव की उत्पत्ति हुई। अजनाभ नाम से ही पूर्वकाल में भारतवर्ष का नाम 'अजनाभवर्ष था।[2] भागवतपुराण (पंचमस्कन्ध) में विस्तार से ऋषभ का इतिहास वर्णित है, तदनुसार उनके सौ पुत्र हुए।[3] ऋषभ को सर्वक्षत्रियों का पूर्वज और आदिदेव कहा गया है।[4] ऋषभ की पत्नी का नाम जयन्ती था।[5] भागवतपुराण(५/४) मे उनके सौपुत्रो मे से केवल १९ के नाम लिखे मिलते हैं—(१) भरत (२) कुशावर्त (३) इलावर्त (४) ब्रह्मावर्त (५) मलय (६) केतु (७) भद्रसेन (८) इन्द्रस्पृक् (९) विदर्भ (१०) कीकट (११) कवि (१२) हरि (१३) अन्तरिक्ष (१४) प्रबुद्ध (१५) पिप्पलायन (१६) आविहोत्रि (१७) द्रुमिल (१८) चमस और (१९) करभाजन।

भरत और अन्तिम नौ (कुल दश) पुत्र श्रमणधर्म के अनुयायी और प्रचारक हुये, शेष ८१ पुत्र महाशालीन, महाश्रोत्रिय, यज्ञशील ब्राह्मण हुये।

भगवान् ऋषभदेव स्वयं श्रमणधर्म के आदिप्रवर्तक थे, अत उन्हें जैनी प्रथमतीर्थंकर और आदिदेव मानते हैं। ऋग्वेद (१०/१३६/२) मे वातरशना पिशग मुनियों का उल्लेख मिलता है—

"मुनयो वातरशनाः पिशंगा वसते मलाः।"

यही बात भागवत (५/३/२०) मे ऋषभपुत्रो और उनके अनुयायियो के

---

१. ब्रह्माण्ड० (१/२/१५)
२. "अजनाभनामैतद् वर्ष भारतमिति यद् आरभ्य व्यपदिशन्ति' (भागवत० ५/७/३),
३. ऋषभं पार्थिवश्रेष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम्। ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्र-शताात्मजः। (ब्रह्माण्ड० १/२/१४/६०)
४. क्षात्रोधर्मो ह्यादिदेवात् प्रवृतः पश्चादन्ये शेषभूताश्चधर्माः। (महा० शा० ६४/२०)
५. भाग० (५/४/८), वहाँ पुराणाकार को इन्द्रपुत्रीजयन्ती का भ्रम हुआ है।

सम्बन्ध में कही है—'मेरुदेव्यां धर्मान् दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणानांमृषीणा मूर्ध्वरेतसां शुक्ल्या तन्वाववतार ।''

जैनग्रन्थों के अनुसार मरीचिऋषि ने ऋषभसे विद्रोह किया, वहाँ मरीचि को तपोभ्रष्ट मुनिवेशी बताया गया है। इससे प्रतीत होता है कि ऋषभ के मरीच्यादि ऋषियों से मतभेद एवं तज्जन्यसंघर्ष हुआ। जैनग्रन्थों में ऋषभपुत्र भरतानुज बाहुबली की विशेषमहिमा और भरत से संघर्ष से भी उक्त तथ्य की पुष्टि होती है। पुराणों में बाहुबली का कोई उल्लेख नहीं है, परन्तु जैनग्रन्थों में भरत के ऊपर बाहुबली की महान् विजय एवं उत्कर्ष दिखाया गया है। बाहुबली की गोमटेश्वर (आन्ध्रप्रदेश) में विशालमूर्ति उनकी ऐतिहासिकता को पुष्ट करती है। विष्णुपुराण[२] में एक हरिणी के गर्भपातजन्य ममता से भरत को संसार से विरक्ति हो गई और मुनिधर्म का पालन करने लगे। यहाँ पर भरत को सौवीरनरेश और परमर्षि कपिल का समकालिक बताया गया है। इसमें भरत की सौवीरनरेश से समकालिकता तो भ्रामक है, परन्तु कपिल से समकालिकता उचित एवं ऐतिहासिक है। भरत और कपिल का समय स्वायम्भुवमनु से छः पीढ़ी पश्चात् और लगभग डेढ़ दो सहस्राब्दी पश्चात् अर्थात् २९००० वि०पू० से २८००० वि० पू० था। आदिम प्रजापति दीर्घजीवी होते थे, बाइबिल के अनुसार स्वायम्भुव (आदम) की आयु ही ९३० वर्ष थी, अन्य ऋषभादि पाँच पुरुष भी दीर्घजीवी होंगे, परन्तु हमने उनकी अवधि ६०० वर्ष ही मानी है, यद्यपि कुछ अधिक होनी चाहिये।

जैनग्रन्थो के अनुसार ऋषभ ब्राह्मीलिपि एवं अंको के आविष्कारक थे एवं अपने पुत्रों को शिल्प एवं विज्ञान की शिक्षा दी। उन्होने कृषि, वाणिज्यादि का प्रवर्तन किया।

भरत के पुत्र सुमति जैनियो द्वारा द्वितीय तीर्थंकर माने जाते हैं।[४] पुराणों में प्रियव्रत की उपरोक्त वंशावली पूर्ण है, ऐसा समझना महती भ्रान्ति होगी, क्योंकि स्वंय पुराणकारों ने कहा है कि पूर्णवंशों का वर्णन करना असंभव सा है। हमारा अनुमान है केवल आधे नाम ही उल्लेखित है, पूर्ण नाम ६० से अधिक होने चाहिये।

---

१. जैनग्रन्थों में ऋषभ के इन पुत्रों के नाम मिलते हैं—भरत, बाहुबली, वृषभसेन, अनन्तविजय, अनन्तवीर्य, अच्युतवीर और वरवीर। (अभिधान-राजेन्द्रकोष पृ० ११२९)

२. विष्णु० (२/१३ अध्याय),

३. तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते। (हरि० १/२/४)

४. भारतस्यात्मजः सुमतिर्नामाभिहितो यमु ह वाव केचित् पाखण्डिन ऋषभ पदवीमनुवर्तमानं चान्यार्या अवेदसमाम्नातां देवतां स्वमनीषया पापीयस्या कलौ कल्पयिष्यन्ति। (भाग० ५/१५/१)

उपर्युक्त प्रियव्रतवंशावली अपूर्ण है, इसकी पुष्टि महाभारत के एक प्रकरण से होती है जहाँ पर शतज्योति के पूर्वज देवभ्राट, सम्राट् और दशज्योति तथा वंशज सहस्रज्योति आदि बताये गये हैं, जिनसे इक्ष्वाकु आदि क्षत्रियों के अनेक वंश प्रादुर्भूत हुये।[1]

प्रियव्रतवंश के अन्तिमशासक शतज्योति आदि विवस्वान् आदि आदित्यों के पूर्ववर्ती थे, जो चाक्षुषमन्वन्तर में, पूर्वदेवयुग में १४००० वि० पू० हुये। शतज्योति आदि से विपुल प्रजाये उत्पन्न हुई, जैसा कि महाभारत के प्रारम्भिक अध्याय से ज्ञात होता है। पुराणादि में इन वंशों का विस्तृत एवं स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता।

ध्रुव का समय—प्रियव्रत के अनुज उत्तानपाद की दो पत्नियाँ थी, सुनीति और सुरुचि। सुरुचि के उत्तमनाम का पुत्र और सुनीति के ध्रुव हुआ परन्तु राजा उत्तानपाद ने पहिले उत्तम को ही राजा बनाया। पुराणो में, यद्यपि स्वारोचिष को द्वितीय मनु माना है, परन्तु कालक्रम की दृष्टि से उत्तम ही द्वितीय मनु था, अतः हम उत्तम का द्वितीय मनु के रूप में यथास्थान उल्लेख करेंगे।[2] ध्रुव के वंश की भी यथास्थान चर्चा की जायेगी।

स्वायम्भुव मनु के लगभग एक सहस्र पश्चात् ध्रुव और उत्तम हुये अतः इन दोनों का समय २८००० वि०पू० था।

भागवतपुराण (४/१०) मे ध्रुववर्णन में ज्योतिषविद्या का संमिश्रण कर दिया है—

> प्रजापतेर्दुहितरं शिशुमारस्य वै ध्रुवः।
> उपयेमे भ्रमिं नाम तत्सुतौ कल्पवत्सरौ।

यहाँ पर शिशुमार, पुराणो में उल्लिखित हमारी नीहारिका (नक्षत्रमण्डल) का नाम है, भ्रमि पृथ्वी की संज्ञा है और कल्प और वत्सर कालमान है। भागवत

---

१. देवभ्राट् तनयस्ततः सभ्राडिति श्रुततः स्मृतः। सुभ्राजस्तु त्रयः पुत्राः प्रजावन्तो बहुश्रुताः। दशज्योतिः शतज्योतिः सहस्रज्योतिरेव च। दशपुत्रसहस्राणि दशज्योतेर्महात्मनः। ततो दशगुणाश्चान्ये शतज्योतेरिहात्मजाः। भूयस्ततो दशगुणाः सहस्रज्योतिषः सुताः। सम्भूताः बहवो वंशा भूतसर्गाः सुविस्तराः। (आदिपर्व १/४३-४७),

२. हरिवंश में सुनीति के स्थान पर सूनृता नाम है, जिसके चार पुत्र हुये उत्तानपादाच्चतुरः सूनृताजनयत् सुतान्। हरि० १/२/७) उनके नाम थे—ध्रुव, कीर्तिमान्, शिव और अयस्पति।

में ही ध्रुव द्वारा वायु की पुत्री इला से उत्कल नाम के पुत्र उत्पन्न होने का उल्लेख है।[१] परन्तु अन्य प्राचीनपुराणपाठों में ध्रुव की पत्नी का नाम शम्भु है[२] ब्रह्माण्ड में उसका नाम भूमि है।[३] शम्भु के दो पुत्र हुये—श्लिष्टि और भव्य। श्लिष्टि ने छाया या सुच्छाया से पांच पुत्रों को उत्पन्न किया—प्राचीनगर्भ, वृषभ, वृक, बृकल और धृति।[४] प्राचीनगर्भ से सुवर्चा (पत्नी) ने 'उदारधी' संज्ञकपुत्र उत्पन्न किया जो एक इन्द्र था।[५] उदारधी ने भद्रा से दिवंजय को उत्पन्न किया, दिवंजय की पत्नी वरांगी ने रिपु और रिपुञ्जय को उत्पन्न किया। इसके अनन्तर की पीढ़ियाँ अर्थात् न्यूनतम ६-३५ तक चक्षुपर्यन्त पीढ़ियों के नाम पुराणो में लुप्त हैं, चक्षु के पुत्र चाक्षुष से मन्वन्तर प्रसिद्ध हुआ, जिसका विवेचन यथास्थान किया जायेगा।

उत्तम मनु—कालक्रम की दृष्टि से उत्तम द्वितीयमनु था। स्वायम्भुवमनु और उत्तममनु में अधिक से अधिक एक सहस्रवर्ष का अन्तर था यद्यपि उत्तम स्वायम्भुवमनु का पौत्र था। अतः मन्वन्तरों में करोड़ों (३० करोड़ ६७ लाख २० सहस्र) वर्षों की कल्पना कितनी हास्यास्पद है, यह विज्ञपाठक समझ सकते हैं।

उत्तम के तेरह पुत्र हुये—अज, परशु, दिव्य, दिव्योषधि, नय, देवाम्बुज, अप्रतिम, गज, बिनीत, सुकेतु, सुमित्र, सुमति और प्लुति।[६]

आदिम वासिष्ठ या किसी वासिष्ठ के पुत्र सप्त वासिष्ठ ऋषि उत्तम मनु के समकालिक सप्तर्षि थे।[७] इनके नाम पुराणो में अन्यत्र उल्लिखित हैं—रक्ष, गर्त, ऊर्ध्वबाहु, सवन, पवन, सुतपा और शंकु। आदिमवशिष्ठवंशवर्णन के अवसर पर इनका उल्लेख किया जा चुका है।

उत्तम के समकालिक देवों के पांचगण थे—सुधामा, देव, प्रतर्दन, शिव और सत्य, इनमें प्रत्येक के साथ द्वादशदेव सम्मिलित थे। इन ६० देवों का ऐतिहासिक महत्व अज्ञात होने के कारण उनका नामोल्लेख अनावश्यक है।

---

१. भाग० (४/१०/२),
२. हरि० (१/२/४)
३. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/९६)
४. हरिवंश० (१/२/१५) और ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/९८),
५. नाम्ना उदारधियं पुत्रमिन्द्रो यः पूर्वजन्मनि (ब्रह्माण्ड० १/२/३६/९९)
६. वायु० (अध्याय ६२),
७. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/३८),

भागवतपुराण (४/१०/४) का यह उल्लेख तथ्यों के विपरीत है कि उत्तम का विवाह नहीं हुआ था और वह पुण्यजनयक्षों द्वारा मृगयारत वन में मारा गया।[1] यह कल्पना ध्रुव की काल्पनिक वैष्णवभक्ति और प्राचीनता के अन्धकार में की गई है, क्योंकि वैष्णवपुराणो के अनुसार ध्रुव विष्णुभक्त था, इसलिये उसके वैमातृज भ्राता एव विमाता की उपर्युक्त दुर्गति प्रदर्शित की गई है। विष्णु की भक्ति का अस्तित्व द्वापरयुग के पूर्व संभवतः वासुदेव कृष्ण से पूर्व नहीं था, परन्तु देवयुग में देवमाता अदिति ने नारायणसंज्ञक साध्यदेव की उपासना की थी[2]। तथापि, नारायण-भक्ति का वहीरूप उस समय नहीं था, जो कलियुग में विकसित हुआ। विष्णु का जन्म उत्तममनु या ध्रुव से १६००० वर्ष पश्चात् हुआ अतः ध्रुव की विष्णुभक्ति एक कोरी कल्पनामात्र है। आगे कथन करेंगे कि विष्णु का जन्म देवासुरयुग के अन्त में हुआ, प्रह्लाद से लगभग एक सहस्र पश्चात्, अतः प्रह्लाद की विष्णुभक्ति भी नितान्त कल्पनामात्र है। विष्णुपुराण और भागवतपुराण की रचना के समय वैष्णव सम्प्रदाय का प्राबल्य था, अतः किसी भी तपस्वी की तपस्या को पुराणकारों ने वैष्णवभक्ति में रंग दिया। ध्रुव ने बालकाल मे लगभग ३१ वर्ष कठोर तपस्या की होगी, इसीलिये प्राचीनपुराणों में लिखा है—

ध्रुवो वर्षसहस्राणि दश दिव्यानि वीर्यवान्।
तपस्तेपे निराहार प्रार्थयन् विपुलं यशः।[3]

ध्रुव के तेज, प्रताप और यश को देखकर ही, उनसे लगभग सत्रह सहस्रवर्ष पश्चात् होने वाले देवासुरगुरु शुक्राचार्य ने यह गाथा रची—

तस्यातिमात्रामृद्धिं च महिमानं निरीक्ष्य च।
देवासुराणामाचार्यः श्लोकमप्युशना जगौ॥
अहोऽस्य तपसो वीर्यमहो श्रुतमहो बलम्।
यदेनं पुरतः कृत्वा ध्रुवं सप्तर्षयः स्थिताः॥ (हरि० १/२/१३-१४)

देवासुरयुग में जब पार्थिव ऐतिहासिकमहापुरुषों के नाम पर दिव्यनक्षत्रों का नामकरण किया गया, तब ही उशना शुक्राचार्य ने यह श्लोक गाया होगा। अधिकांश ग्रहनक्षत्रों के नाम देवासुरयुग के महापुरुषों के नाम पर है, परन्तु ध्रुवनक्षत्र का नाम ही अतिपुरातन प्रजापतियुगीन महापुरुष के नाम पर है, इससे ध्रुव की महिमा

---

१. उत्तमस्त्वकृतोद्वाहो मृगयायां बलीयसा।
हतः पुण्यजनेनाद्रौ तन्माताऽस्य गतिं गता॥

२. अदितिः पुत्रकामा साध्येभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मौदनमपचत् (तै. सं. ६/५/६/१)

३. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/९०-९१), हरिवंश में तप की अवधि दिव्यतीनसहस्र वर्ष बताई गई है (१/२/१०)

प्रकाशित होती है कि देवासुरयुग में, सोलहसहस्रवर्षपश्चात् भी ध्रुव का गौरव देदीप्यमान, ज्वलन्त या यथावत्स्मृत था और २९ सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर आज भी धूमिल नहीं है।

स्वारोचिषमनु—मार्कण्डेयपुराण (अध्याय ५४) में कथा है कि वरूथिनी नामक अप्सरा से कलिगन्धर्व के समागम से स्वारोचि का जन्म हुआ। स्वारोचि मुनि की तीन पत्नियाँ हुई मनोरमा, कलावती और विभावरी, इनसे स्वरोचि ने तीन पुत्र उत्पन्न किये विजय, मेरुनन्द और प्रभाव। स्वारोचि ने छः सौ वर्ष पर्यन्त भोग किया और तीन पुरों का निर्माण किया। पूर्व में कामरूपपर्वत पर विजयपुर विजय हेतु, उत्तरदिशा में नन्दवतीनगरी मेरुनन्द को और दक्षिण में 'ताल'संज्ञकनगर प्रभावसंज्ञकपुत्र को दिया। तदनन्तर मृगी अप्सरा से स्वारोचि ने धृतिमान्संज्ञक पुत्र उत्पन्न किया, उसी का नाम स्वारोचिष मनु हुआ।

ब्रह्माण्डपुराण (१/२/३५/८) से ऐसा आभास होता है कि स्वरोचि महर्षि क्रतु के पुत्र थे—

तुषितायां समुत्पन्नाः क्रतोः पुत्राः स्वारोचिषः।

अन्यत्र स्वारोचिषमनु को स्वायम्भुवमनु के अन्वय (वंश) का ही कहा है—स्वारोचिष, उत्तम, रैवत और चाक्षुषमनु स्वायम्भुवमनु के ही अन्वय है।[1]

स्वारोचिष के समय मे देवो के दो गण थे—वासिष्ठ और पारावत, इनमें द्वादशकुल के २४ देवता थे, जिन्हें छन्दज भी कहा जाता था। इन देवों को क्रतु (यज्ञ) के पुत्र भी कहा गया है। इनके नाम है—वासिष्ठगण में दिवस्पर्श, जामित्र, गोपद, भासुर, अज, भगवान्, द्रविण, आप, महौजा, चिकित्वान्, निभृत और अंश। पारावतगण में द्वादश देव थे—प्रचेता, विश्वदेव, समञ्च, विश्रुत अजिह्म, अरिमर्दन, आयु, दान, महमिान, दिव्यमान, अज, उष, यवीय, होता और यज्वा।[2]

स्वारोचिषमनु के समकालिक देवेन्द्र का नाम विपश्चित् था।[3] उपर्युक्त देवताओं की संज्ञा तुषित थी, क्योंकि क्रतु ने ये तुषितापत्नी से उत्पन्न किये थे।[4]

---

१. स्वायम्भुवो मनुस्तात मनुः स्वारोचिषस्तथा।
उत्तमस्तथा चैव रैवतश्चाक्षुषस्तथा॥ (हरि० १/७/४), तथा विष्णुपु० (३/१/२४)

२. वायुपुराण (अध्याय ६२), ३. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/१६),

४. तुषितायां समुत्पन्नाः क्रतोः पुत्राः स्वरोचिषः॥ (१/२/३६/८)

भागवत में इनके नाम तोष, प्रतोष इत्यादि हैं।[1] इस मन्वन्तर के सप्तर्षि थे ऊर्ज वासिष्ठ, स्तम्ब काश्यप, प्राण (या द्रोण) भार्गव, ऋषभ आङ्गिरस, दत्तात्रि पौलस्त्य, निश्चल आत्रेय और अर्वरीवान् या धावन् पौलह।[2] अन्य पुराणो (यथा हरिवंश १/७/१२ एवं विष्णु० ३/१/११) मे इनके नाम भ्रष्ट हुए हैं, यथा हरिवंश में उनके नाम—हैं और्व, स्तम्ब, प्राण, दत्त, बृहस्पति और काश्यप। ये नाम भ्रामक हैं अतः त्याज्य है।

स्वारोचिष मनु के दश या नौ पुत्रों के नाम भी पुराणों में पर्याप्त भ्रष्ट हुये हैं—ब्रह्माण्ड में नाम[4] है—चैत्र, किंपुरुष, कृतान्त, विभृत्, रवि, बृहदुक्थ, नव, सेतु, और श्रुत (नौपुत्र), वायुपुराण में ये नाम मिलते जुलते हैं—चैत्र, कविरुत, कृतान्त, विभृत, रवि, बृहत् द्रुह, नव और शुभ।[5] परन्तु हरिवंश[6] के नामो में पर्याप्त अन्तर है—हविर्ध्र, सुकृति, ज्योति, आप, मूर्ति, अयस्मय, प्रथित, नमस्य, ऊर्ज और नभ। यहाँ 'आपोमूर्ति' एक नाम को आप और मूर्ति मे विभक्त करके दशसंख्या पूर्ति कर दी है। वस्तुतः मनु के नौ ही पुत्र थे।

उपर्युक्त सप्तर्षियों के नामो से सिद्ध है कि वसिष्ठ, कश्यप, भृगु, अङ्गिरा आदि के वंशज, स्वारोचिषमनु के समकालीन थे, अतः देवासुरजनक कश्यप आदिम कश्यप नही थे, उनका नाम परमेष्ठी था। वैदिकग्रन्थो में भी उनका नाम 'परमेष्ठी' ही मिलना है, कश्यप नहीं—

परमेष्ठीनो वा एष यज्ञोऽग्र आसीत्— —तेन प्रजापतिः— —॥[7]

उपर्युक्त सप्तर्षियो का समय पृथु आदि से बहुत पूर्व था। स्वारोचिमनु का समय २८००० वि०पू० होना चाहिये, स्वायम्भुवमनु से १००० वर्ष पश्चात्।

तामसमनु—यह मनु भी प्रियव्रत का वंशज था। तामस के दशपुत्र[8] हुयें धृति, तपस्य, सुतपा, तपोमूल, तपोरत, तपोधन, कल्माष, तन्वी, धन्वी और

---

१. भाग० (४/१/७), २. वायु० (अध्याय ६२) ब्रह्माण्ड

३. (१/२/३६/१७-१८)

४. ब्रह्माण्ड० (१/२।३६/१९),

५. वायुपुराण (६२ अ०),

६. हरिवंश (१/७/१४),

७. तै०सं० (१/६/९/२),

८. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६) में तामस के पुत्रों के नाम हैं—जानुजंघ, शान्ति, नर, ख्याति, शुभ, प्रियभृत्य. परिक्षित्, प्रस्थल, दृढेषुधि, कृशाश्व, कृतबंधु,

और परंतप। वस्तुतः ये सब मनु के वंशज थे, केवल पुत्र नहीं जिस प्रकार आग्नीध्र को स्वायम्भुवमनु का पुत्र कहा गया है, परन्तु थे वे पौत्र।

पुलस्त्य के पुत्र (या वंशज) सत्य, सुरूप, सुधिय और हरि, ये देवताओं के चार गण थे, एक एक गण में पच्चीस देवता थे अतः १०० देव हुये। सप्तर्षियों के नाम—काव्य आङ्गिरस, पृथु काश्यप, अग्नि आत्रेय, ज्योतिर्धाम भार्गव, चरक पौलह, पीवर वासिष्ठ, और चैत्र पौलस्त्य।[1] हरिवंश (१/७/२१) में इनके नाम हैं—काव्य, पृथु, अग्नि, जन्यु, धाता, कपीवान् और अकपीवान्। इन्द्र का नाम शिवि था।

तामसमनु स्वायम्भुव, स्वारोचिष, और उत्तम मनु के कुछ शताब्दी पश्चात् हुये, इनका समय भी २८००० वि०पू० होना चाहिये।

मार्कण्डेयपुराण के अनुसार स्वराष्ट्र ने ढ़धदृन्वा की पुत्री उत्पलावती से तामसमनु को उत्पन्न किया।[2] परन्तु उनके वंश का पूर्णवंशवृक्ष न मिलने कारण क्रम नहीं जोड़ा जा सकता।

रैवतमनु—ऋतवाक् नाम के मुनि ने रेवती नाम की पुत्री का विवाह दुर्गम संज्ञकराजा से हुआ, जो प्रियव्रतवंश के राजा विक्रमशील की कालिन्दीनाम की पत्नी से उत्पन्न हुये थे। दुर्गम की अन्य पत्नियाँ थी सुभद्रा, शान्ततनया, कावेरी, सुराष्ट्रजा, सुजाता, कदम्बा, वरूथजा विपाटा और नन्दिनी। दुर्गम ने रेवती से रैवतमनु को उत्पन्न किया[3]।

रैवतमनु के सप्तर्षि थे—वेदबाहु, यदुध्र, वेदशिरा, हिरण्यरोमा, पर्जन्य, सोमपुत्र, ऊर्ध्वबाहु, सत्यनेत्र आत्रेय।[4] ब्रह्माण्ड में इनके नाम है—हिरण्यरोमा आङ्गिरस, वेदश्री भार्गव, ऊर्ध्वबाहु वासिष्ठ, पर्जन्य पौलह, सत्यनेत्र आत्रेय, पौलस्त्य देवबाहु और सुधामा काश्यप।[5] युग के इन्द्र का नाम 'विभु' था जो अत्यन्त विक्रान्तपौरुष था।

चरिष्णुवासिष्ठ के पुत्र या वंशज चार चार देवगण थे—अमृतात्मा, आभूतरज, विकुण्ठ, और सुमेधा। इनमें प्रत्येक गण में चौदह देव थे। रैवत के पुत्रों के नाम थे—धृतिमान्, अव्यय, युक्त, तत्वदर्शी निरुत्सुक, अरण्य, प्रकाश, निर्मोह,

---

१. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/६८)

२. मा०पु० (अ० ६६),

३. मा० पु० (अ० ६७),

४. हरि० (१/७/२५-२६),

५. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/६१-६२)

सत्यवाक् और कवि ।[1] ब्रह्माण्ड में इनके नाम हैं—महावीर्य, सुसंभाव्य, सत्यक, परहा, शुचि, बलबन्धु, निरामित्र, कंबु, शृंग, और धृतवान् ।[2]

रैवत का वायुपुराण में 'चरिष्णु' नाम भी मिलता है ।[3]

रौच्यमनु—आदिम दश विश्वसृजों या प्रजापतियो में पुलह के पुत्र या वंशज रुचि प्रजापति थे[4], स्वायम्भुवमनु की पुत्री आकूति का विवाह रुचि के साथ हुआ था ।[5] अतः रुचि के वंशज रौच्य या तो कर्दम का नाम है या कोई अन्य वंशज । ब्रह्माण्ड और वायु में स्पष्टरूप से रौच्य को रुचि का पुत्र और पुलह का पौत्र बताया गया है, इतने स्पष्ट वर्णन से सिद्ध है कि रौच्यमनु का समय स्वायम्भुव मनु से कुछ शताब्दी के अनन्तर ही था और वे चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्ण आदि सभी मनुओं से बहुत पूर्व होचुके थे । रौच्य मन्वन्तर के देवताओ को भी ब्रह्मा के मानस पुत्र और पुलह का पुत्र कहा है, अतः इन्हें भविष्य का मनु मानना महती बिडम्बना और उत्तरकालीन भ्रान्ति है ।

रौच्य मनु के समकालिक सप्तर्षि आदिम दश प्रजापतियो वसिष्ठादि के पुत्र या वंशज थे, नकि प्रचेतावरुण के पुत्र द्वितीय जन्म के वसिष्ठादि के पुत्र, इस तथ्य से भी रौच्यमनु का समय स्वायम्भुवमनु के पश्चात् (२८००० वि० पू० के पश्चात्) का नही हो सकता, क्योकि रौच्यमनु समकालिकसप्तर्षि आदिम प्रजापतियो के निकटतम वंशज थे ।

वे सप्तर्षि थे—धृतिमान् आङ्गिरस, अव्यय पौलस्त्य, तत्वदर्शी पौलह, निरुत्सुक भार्गव, निष्प्रकम्प्य आत्रेय, निर्मोह काश्यप और सुतपा वासिष्ठ ।

उपर्युक्त रौच्य के पिता साक्षात् रुचि प्रजापति न होकर उनके कोई वंशज होंगे, उनका विवाह हुआ जो किसी वारुण पुष्कर की पुत्री प्रम्लोचनानाम की सुन्दरी थी, यही रौच्यमनु की माता थी ।[6]

रौच्यमनु के पुत्रों या वंशजों के नाम थे—चित्रसेन, विचित्र, नय, धी धृत, भव, अनेक, क्षेमवृद्ध, सुरस और निर्भय ।

---

१. हरि० (१/७/२६),

२. ब्रह्माण्ड० (१/२/३६/६३-६४),

३. वायु० (अ० ६२),

४. पुलहात्मजपुत्रास्ते विज्ञेयास्तु रुचेः सुताः ।। (ब्रह्माण्ड० ३/४/१/१०१),

५. रुचेः प्रजापतेश्चैव आकूतिं प्रत्यपादयत् (ब्रह्माण्ड० १/२/०/२३),

६. प्रम्लोचनानामतन्वङ्गीतत्समीपे वराप्सरा ।
जाता वरुणपुत्रेण पुष्करेण महात्मना ।। (मा० पु० ६०/१,३),

उस समय 'दिवस्पति' संज्ञक महावली देवेन्द्र था, जो सुत्रामाण, सुधर्माण और सुकर्माणसंज्ञक आज्यादिभक्षी ३३ देवों का शासक था। सुत्रामादि उपर्युक्त देवों के तीन प्रसिद्ध गण थे।

भौत्यमनु—हरिवंश (१/७/४५) में रुचि की पत्नी भूति से उत्पन्न पुत्र ही भौत्यमनु हुआ।[1] अतः रौच्य और भौत्य समकालिक मनु थे, पुनः एक पिता के दो पुत्रों में कितने वर्षों का अन्तर हो सकता है, यह सम्यक्रूपेण वोध्य तथ्य है, इनमें तो शताब्दियों का क्या, कुछ वर्षों का ही अन्तर था। भौत्यमनु को भविष्यकालिक मनु मानना पूर्ववत् विडम्बना एवं भ्रान्तिमात्र है।

मार्कण्डेयपुराण (अ० ६१) में भौत्य को अङ्गिरा के पुत्र भूति का पुत्र बताया गया है। भूति के अनुज का नाम सुवर्चा था। इन्ही भूतिमुनि का पुत्र भौत्य मनु हुआ।

ब्रह्माण्डपुराण (३/४/१/११६) में रौच्य और भौत्य मनुओं को क्रमशः पौलह (पुलहवंशीय) और भार्गववंशीय बताया गया है।[2] अतः भौत्यमनु का वंश विवादास्पद है, वे संभवतः भार्गव आङ्गिरस वंश के ही थे, हरिवंश में उन्हे रुचि का पुत्र बताया है, वह भ्रान्ति ही प्रतीत होती है। भौत्यमनु भूति ऋषि के पुत्र ही थे।

भौत्यमनु के समकालिक सप्तर्षि थे—अग्नीध्र काश्यप, मागध पौलस्त्य, अग्निबाहु भार्गव, शुचि आङ्गिरस, शुक्र वासिष्ठ, युक्त पौलह, श्वाजित आत्रेय।[3] श्वाजित का पाठ अन्यत्र अजति है।[4]

भौत्यमनु समकालिक देवों के पांच गण थे—चाक्षुष, पावित्र, कानिष्ठ, भ्राजित और वाचावृद्ध। स्वायम्भुवमन्वन्तर के ऋषियों को ही वाचावृद्ध कहा जाता था।[5] इससे भी भौत्यमनु और स्वायम्भुवमनु के समयों में नैकट्य सिद्ध होता है।

चक्षु या चाक्षुषमनु औत्तानपादि ध्रुव का वंशज था, भौत्यमनु के समकालिक चाक्षुषदेवों का एक गण था, इससे भौत्यमनु का समय निश्चित करने में सहायता

---

१. भूत्यां चोत्पादितो देव्यां भौत्योनाम रुचेः सुतः ॥

२. रौच्यो भौत्यश्च यौ तौतु मतौ पौलहभार्गवौ।

३. ब्रह्माण्ड० (३/४/१/११२-११३)

४. हरिवंश० (१/७/८४),

५. वाचावृद्धानृषीन्विद्धि मनोः स्वायम्भुवस्य वै ॥ (ब्रह्माण्ड० ३/४/१/१०६),

मिलती है। वर्तमानपुराणपाठों के अनुसार चक्षु का समय स्वायम्भुव मनु से ३६ पीढ़ी पश्चात् और दक्षप्राचेतस (१४००० वि० पू०) से १० पीढी पूर्व था। अतः चाक्षुष का समय स्वायम्भव मनु से लगभग बारहसहस्र पश्चात् और दक्ष प्राचेतस से दो सहस्र पूर्व होना चाहिये अर्थात् चाक्षुपमनु का समय १६००० वि०पू० होना चाहिये।

प्रजापतियुग या आदिमयुग में सभी मनु प्रमुखराष्ट्रों के वंशप्रवर्तक प्रशासक थे, यथा वैवस्वत मनु ने भारतवर्ष मे शासन का प्रवर्तन किया और अनेक क्षत्रिय जातियाँ उनसे उत्पन्न हुई, इसी प्रकार प्राचीन मिश्र देश का आदि प्रवर्तक कोई मनु ही था, इसी प्रकार अन्य मनुगण प्राचीन देशों के आदिम वंशप्रवर्तक प्रशासक थे, वे किन किन देशों के क्षात्रधर्मप्रवर्तक थे, आज इस इतिहास से हम प्रायेण अनभिज्ञ ही हैं, संभव है भविष्य मे कुछ तथ्यो से हम अवगत हो जायें।

चाक्षुषमनु का वृत्तांत और कालनिर्णय

चाक्षुष मनु की तिथि और इतिवृत्त निश्चित करने से पूर्व, तत्सम्बन्धीवंश वृक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे तिथ्यादि निर्णय करने में सहाय्य प्राप्त हो—
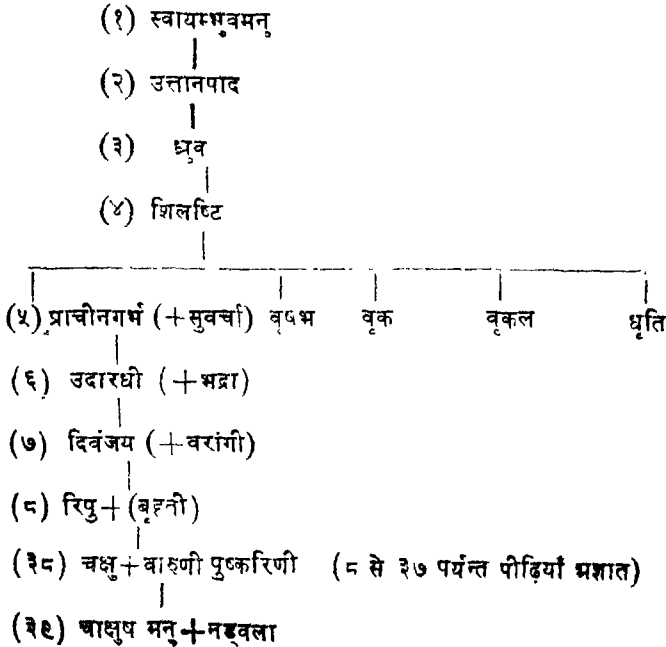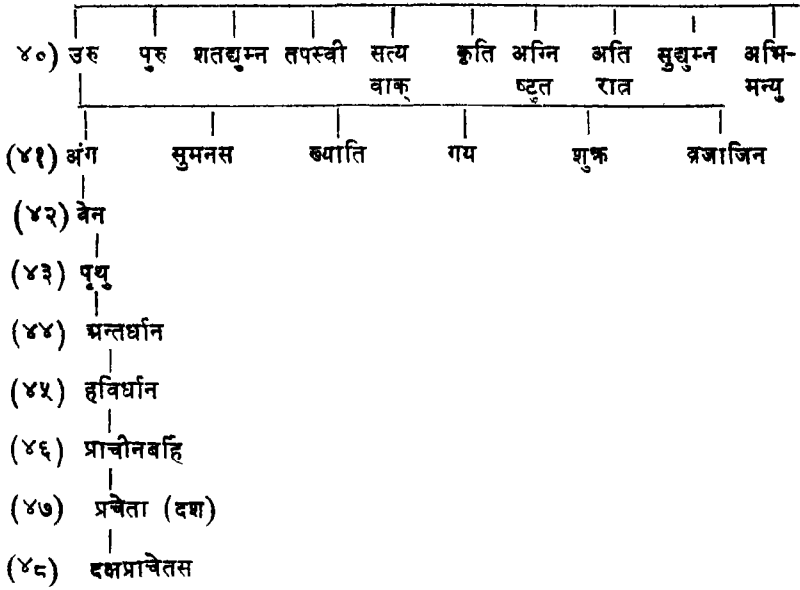
पुराणो में रिपु से चक्षुपर्यन्त (८ से ३७) पीढ़ियाँ) ३००० वर्ष अज्ञात या लुप्त हैं जो प्रियव्रत की वंशावली में समुपलब्ध हैं। वेद में मानुषयुग या मनु का समय १०० वर्ष है, चाक्षुषमनु, पुराणपाठानुसार दक्षप्राचेतस से १० पीढ़ी पूर्व हुआ, जिसका समय १००० वर्ष हुआ, क्योंकि २१ पीढ़ियाँ लुप्त है तो चाक्षुष मनुसे दक्ष तक न्यूनतम २३ पीढ़ियाँ अवश्य होनी चाहिये।

(चार सावर्णिमनु)

वंश—प्राचेतस दक्ष के पुत्र रोहित और प्रियाके पुत्र थे।[1] कुछ पुराणपाठों में इनको भविष्य के मनु समझकर इस मन्वन्तर के भविष्यकालिक (अनागत) सप्तर्षियों के नाम घड़ दिये हैं—कृष्णद्वैपायन, कृपाचार्य, अश्वत्थामा द्रौणि, दीप्तिमान् आत्रेय, ऋष्यशृंगकाश्यप, गालव कौशिक और जामदग्न्यराम भार्गव।[2] ये सभी

---

१. ब्रह्माण्ड० (३/४/१/२४),

२. ब्रह्माण्ड० (३/४/१/१०-१२)

ऋषि विभिन्न युगों में हुये, जिनमें द्वैपायन, कृप और अश्वत्थामा भूतकालिक भारतयुद्ध के प्रसिद्ध पात्र थे, यह पाठ भविष्यवर्णन की भ्रामक धारणा से आक्रान्त है।

मेरुसावर्णि या दक्षसावर्णि--ब्रह्माण्डपु० मे ही मेरुसावर्ण प्रथममनु के सप्तर्षि सही पढ़े गये है — मेधातिथिपौलस्त्य, वसुकाश्यप, ज्योतिष्मान्भार्गव, द्युतिमान् आङ्गिरस, वसुमान् वासिष्ट, हव्यवाहन आत्रेय और सुतपार्पौलस्त्य। एक ही स्थान पर दो पाठो से भ्रम की पुष्टि और असत्य का निराकरण हो जाता है, अधिकांश पुराणो में अश्वत्थामा आदि के ही नाम हैं, केवल ब्रह्माण्ड मे सत्यपाठ अवशिष्ट है। ब्रह्माण्ड में स्पष्ट लिखा है कि मेरुसावर्णि (प्रथम) रोहित के देवत्रयगण वैवस्वत अन्तर में ही हुये—

परामरीचिगर्भाश्च सुधर्माणश्च ते त्रय।
संभूताश्च महात्मानः सर्वे वैवस्वतेऽन्तरे।। (ब्रह्माण्ड० १/४१/५५)

अतः वैवस्वतमनु के समकालीन[1] उपर्युक्त चार मनुओ को भविष्य के मनु मानना पूर्णतः भ्रान्तिमात्र है। इस मेरुसावर्णिमनु के इन्द्र पार्वतीनन्दन स्कन्द षण्मुख कार्तिकेय देवों के इन्द्र थे।[2] स्पष्ट ही मेरुसावर्णि और स्कन्द देवयुग (१३००० वि०पू०) के पुरुष थे।

धर्मपुत्र सावर्णमनु— द्वितीय सावर्णिमनु का नाम था धर्मपुत्र सावर्णि। इस युग का इन्द्र था—शान्ति और सप्तर्षि थे हविष्मान् पौलह, सुकीर्ति भार्गव, आपोमूर्ति आत्रेय, आपव वासिष्ठ, अप्रतिम पौलस्त्य, नाभग काश्यप और अभिमन्यु आङ्गिरस। मनु के दशपुत्र या वंशज थे—सुक्षेम, उत्तमौजा, भूरिसेन, शतानीक, निरामित्र, वृषसेन, जयद्रथ, भूरिद्युम्न और सुवर्चा।

रुद्रसावर्ण—एकादश पर्याय (युग) में रुद्रसावर्णि (काश्यप) में वृषसंज्ञक इन्द्र हुआ और सप्तर्षि थे—हविष्मान् काश्यप, वपुष्मान् भार्गव, आरुणि आत्रेय, अनघ वासिष्ठ, पुष्टि आङ्गिरस, निश्चर पौलस्त्य और अतितेजा पौलह। मनु के नवपुत्र हुये—संवर्तक, सुशर्मा, देवानीक, पुरोवह, क्षेमधर्मा, दृढायु, आदर्श, पौंड्रक और मह।

---

१. प्राचेतसमनु के श्लोक (शान्तिपर्व)

२. वैवस्वतेऽन्तरे जातौ द्वौ मनू तु विवस्वतः।
वैवस्वतो मनुर्यश्च सावर्णिर्यश्चश्रुतः।
सावर्णमनवो ये चत्वारस्तु महर्षिजाः।।
स्कन्दोऽसौ पार्वतीयो वै कार्तिकेयस्तु पावकिः। (ब्रह्माण्ड० ३/४/१/५१-५३)

द्वादश मनु--इन्द्रसावर्णिया ब्रह्मसावर्णि—इसमें इन्द्र (देवराज) ऋतधामा था और सप्तर्षि—द्युति वासिष्ठ, सुतपा आत्रेय, तपोमूर्ति आङ्गिरस तपस्वीकाश्यप, तपोधनपौलस्त्य, तपोरतिपौलह और तपोधृति भार्गव। मनु के दश पुत्र—देववान्, उपदेव, देवश्रेष्ठ, विदूरथ, मित्रवान् मित्रसेन, चित्रसेन, अमित्रहा, मित्रबाहु, और सुवर्चा।

पुराणो मे उपर्युक्त मनुनामों, इन्द्रो, और सप्तर्षियो के नामक्रमादि में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि अन्य तुलनात्मक या समकालिक घटनाओं के अभाव में सावर्णिमनुओ के ऐतिह्य का महत्व न्यून ही है परन्तु पुराणोल्लिखित सम्पूर्णमानव इतिहास का सार प्रस्तुत करने की दृष्टि से इनका महत्व अतिरोहित है।

तेरहवें मनु— वैवस्वत (श्राद्धदेव) -- जलप्रलय के नायक वैवस्वतमनु विवस्वान् के पुत्र थे। विवस्वान् आदित्य चतुर्थपरिवर्तयुग के 'व्यास' थे। उनके ज्येष्टपुत्र मनु का जन्म चतुर्थ परिवर्तयुग(१३००० वि पू)—आजसे लगभग १५००० वर्ष पूर्व हो चुका था। बाइबिल में वर्णित नूह और पुराणोल्लिखित मनु एक ही व्यक्ति थे। बाइबिल मे मनु का इतिहास इस प्रकार उल्लिखित है—"मनु की आयु जब ५०० वर्ष की थी, तब उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुये— साम, हाम और जाफेट।" "मनु की आयु जब ६०० वर्ष थी तब जलप्रलय आई।" मनु (नूह) की पूर्ण आयु ९५० वर्ष थी—"And all the days of Nooh were nine hundred and fifty years and he died" (Holy Bible, p. 13).

यम वैवस्वत, मनु का अनुज था। अवेस्ता के अनुसार यम ने ईरान में १२०० राज्य किया।

वैवस्वतमनु जलप्रलय के पश्चात् ३५० वर्ष और जीवित रहे, अतः उनका देहान्त छठे परिवर्तयुग के अन्त या सातवेंयुग के प्रारम्भ (१२००० वि. पू.) में हुआ।

चौदहवें (अन्तिम) मनुसावर्ण — पूर्वजमनु का वैमातृज भ्राता (अनुज) ही सावर्णमनु हुआ—

पूर्वजस्य मननोस्तात सदृशोऽयमिति प्रभुः।
सावर्णत्वान्मनोर्भूयः सावर्ण इतिचोक्तवान्॥

हरिवंश १।७।१६ पुराणपाठो में यह तथ्य स्पष्टतया अवशिष्ट है कि यह अन्तिममनु **दैत्यराज वैरोचनबलि के समकालिक था—**

"विरोचनसुतस्तेषां बलिरिन्द्रो भविष्यति ।" (वि. पु. ३।२।१८)

बलि का साम्राज्य अन्तकाल पुराणो मे स्पष्टत निर्दिष्ट है—सप्तम परिवर्तयुग (११८४० वि. पू. से ११४८० वि. पू. के मध्य) :

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे ।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत् ।। (वायुपुराण)

अतः सावर्णमनु भविष्यकालिक मनु नही, वे आज से लगभग १४००० वर्ष पूर्व हुये । उस समय विशिष्ट व्यक्तियो (मनु, इन्द्र, सप्तर्षि आदि) की आयु लगभग सहस्रवर्ष और पाच सौवर्ष के मध्य होती थी ।

सावर्णमनु के पुत्रो के नाम थे—वरीयान् अवरीयान्, सम्मत, धृतिमान्, वसु, चरिष्णु, अधृष्णु, वाज और सुमति । (हरिवंश १।७।५६) ।

सावर्णमनु के समय अखण्ड विश्व का सम्राट् दैत्येन्द्र बलि वैरोचन था ।

अध्याय द्वितीय

परिवर्तयुग

प्राचीन इतिहास को अभूतपूर्व, अद्भुत, मौलिक और क्रान्तिकारी निर्णायक खोज

तीन सौ साठ मानुषवर्षों का ऐतिहासिक परिवर्तयुग (**दिव्यसंवत्सर**) **और चौदहमनुओं का कालक्रम**—इतिहासपुराणों के पुरातनपाठों में स्वायम्भुवमनु से महाभारतयुद्धकालपर्यन्त की महत्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख 'परिवर्तयुग' या 'पर्याययुग'संज्ञक अतिविख्यात कालमान मे किया जाता था। परन्तु, उत्तरकाल मे इस कालमान किंवा युगमान का पुराणपाठों में प्रायः लोप-सा हो गया तथा 'दिव्यमानुषगणना' के सम्बन्ध में एक महती भ्रान्ति उत्पन्न हो गई, जिससे पुराणो मे 'मन्वन्तरसम्बन्धी' ऐतिहासिकगणना पूर्णतः गड़बड़ा गई। ऐसी स्थिति में पाश्चात्य षड्यन्त्र से अभिभूत भारत में पाश्चात्य मिथ्याभिमानी और सच्चे इतिहासकार भी पुराणो के आधार पर प्राचीन (प्राग्महाभारतकालीन) कालक्रम पर यथार्थ प्रकाश नही डाल सके और अनेक विद्वान् युगों की मनमानी व्याख्या करते रहे, यथा डा० त्रिवेद ने २८ परिवर्तयुगों को ६० वर्ष का मान कर मनमानी व्याख्या की। श्री डी० आर० मनकड ने चतुर्युग मे प्रत्येक (कृतत्रेतादि) को एक सहस्रवर्ष का माना। परन्तु, इन व्याख्याओं से कोई गुत्थी सुलझी नहीं। सत्य यह है कि इतिहास में कल्पना या मिथ्याकल्पना से कोई समस्या हल नहीं होती। 'इतिहास' सम्पूर्ण पद की व्याख्या है .'इति हैवमासीदिति कथ्यते स इतिहासः' 'जो सत्य घटनाक्रम वास्तव में हुआ था, 'वही इतिहास है, शेष कल्पना''' अनितिहास '''मिथ्या होती है।

इन पंक्तियो के लेखक ने, किसी दिव्यशक्ति की कृपा से सत्य का वरण किया और प्राचीन पुराणपाठों के घोर अन्धकार में से 'परिवर्तयुग' का कालमान प्रकाशित किया है, जिसमें स्वायम्भुवमनु से वासुदेवकृष्णपर्यन्त महापुरुषों की तिथियां यथार्थरूप से निश्चित की जा सकती हैं। 'परिवर्तयुग' की कालगणना के रहस्योद्-

घाटन से पूर्व, इस सम्बन्ध में देशी-विदेशी कुछ अन्वेषको की विवशता, इस सम्बन्ध में द्रष्टव्य है —

सर्वप्रथम, इस सम्बन्ध में, विख्यात पाश्चात्य पुराण अनुसंधाता पार्जीटर का मत आलोच्य है। क्योंकि पार्जीटर के कोई पूर्वाग्रह नही थे, वह स्वबुद्धि से सत्य की खोज करना चाहता था, संभवत: इसीलिये वह कीथादि की भांति मैकालेषड्यन्त्र मे सम्मिलित नही था, अतः वह, प्राचीनभारतीय इतिहास के सम्बन्ध मे पुराणो के आधार पर कुछ सच्ची खोजें कर सका, तथापि विदेशी होने के कारण तथा युग प्रभाव के कारण, वह, पुराणोल्लिखित यथार्थ ऐतिहासिक कालगणना को नही समझ सका। २८ परिवर्तयुगो के सम्बन्ध में निम्न उद्धरण से पार्जीटर की अशक्ति और अज्ञान प्रकट होता है—

"It is unneccssary here to pursue this matter into the later fully developed theory of the yugas and Manvantaras, wherein 71 four age periods (chaturyuga) made up a Manvantara. It was a fenciful Brahmanical elaboration, and one feature in it is that the present time is the Kaliage in 28th fourage period of the Vaivasvata Manvatara, so the events of traditional history were sometimes distributed among those 28 periods. Thus a pretentious passage declares—Datta Atreya as Vishnu's fourth incarnation and Markandeya lived in the tenth Tretayuga (i.e. in the Treta age of the 10th four age period). Mandhata as his fifth incarnation and Utathya lived in the 15th Treta, Rama Jamadagnya as his sixth and Vishvamitra lived in the 19th Treta. Dasaratha's son Rama, as his seventh and Vasudeva lived in the 28th age, Vyasa as his eighth with Jātukarṇya, and Krisṇa as his ninth with Brahmā—gārgya lived in the 28th Dwâpara. Such assignments sometimes observe some chronological consistency, often, they are erratic and in any case, being Brahmanical notions lacking the historical sense as they are unreliable." (Ancient Indian Historical Tradition, p. 179).

पार्जीटर, इस सम्बन्ध में न तो सत्य को समझना चाहता था और न ही उसमें यह समझने की शक्ति थी, अतः उसकी आलोचना करना निरर्थक ही होगा। जबकि महान् वैदिक अनुसंधाता और सच्चे भारतीय इतिहासज्ञ पं० भगवद्दत्त कथित त्रेता (परिवर्त) युग सम्बन्धी अंश को नही समझ सके, जैसा कि उन्होंने स्वय ही लिखा है — "वायुपुराण के बहुत से त्रेता एक त्रेता के अवान्तरविभाग हैं। वायु के अनुसार अद्यात्रेता से लेकर चौबीसवेंत्रेता तक निम्नलिखित व्यक्ति हुए—

दक्ष प्रजापति	—	आद्य त्रेतायुग में
बारह देव (आदित्य)	—	आद्य त्रेतायुग में
करन्धम	—	त्रेतायुगमुख में
आवीक्षित मरुत्त	—	त्रेतायुगमुख में
तृणबिन्दु	—	तृतीय त्रेतायुग मे
दत्तात्रेय	—	दशम त्रेतायुग मे
मान्धाता	—	पन्द्रहवें त्रेतायुग में
जामदग्न्य राम	—	उन्नीसवां त्रेतायुग में
दाशरथि राम	—	चौबीसवें त्रेतायुग में

कालक्रम की दृष्टि से ये लोग थोड़े-थोड़े अन्तर पर एक दूसरे के पश्चात् हुये। यदि ये पृथक् पृथक् चतुर्युगो के पृथक् पृथक् त्रेता में होते तो इनके मध्य में द्वापर, कलि और सत्ययुग के अन्य महापुरुष अवश्य गिने जाते। पर ऐसा किया नही गया। अतः वायु के अनेक एक त्रेता के अवान्तरविभाग हैं - - -। यदि इन अवान्तर त्रेताओं की अवधि तथा आदियुग, देवयुग और त्रेतायुग आदि की अवधि जान ली जाये, तो भारतीय इतिहास का सारा कालक्रम शीघ्र निश्चित हो सकता है। हम अभी तक इस बात को पूर्णतया जान नही पाए, (भारतवर्ष का बृहद् इतिहास, भा० १ पृ० १५६)।

पं० भगवद्दत्त ने अन्यत्र सहस्रबाहु अर्जुन के सम्बन्ध में लिखा—"सहस्रबाहु अर्जुन की मृत्यु जामदग्न्य राम के हाथो हुई। पुराणो के अनुसार जामदग्न्य राम त्रेता-द्वापर की सन्धि और उन्नीसवे त्रेता में हुआ। इन कथनो से प्रतीत होता है कि पुराणो में एक ही त्रेता के अनेक अवान्तरविभाग किए गए हैं। बहुत संभव है त्रेता तीन सहस्रवर्ष का हो और पुराणों ने उसका १२५ वर्ष का एक अवान्तर त्रेता माना हो" (भा० इ० भा० २, पृ० १०४)

पं० भगवद्दत्त की यह पूर्णतः भ्रान्ति है कि किसी त्रेतायुग के अनेक अवान्तर विभाग थे। मूलतः यह भ्रान्ति पं० भगवद्दत्त की नही, यह पुराणों के उत्तरकालीन भ्रष्टपाठो से ही उत्पन्न हुई है।

पुराणों में युगगणनासम्बन्धी महती भ्रान्ति-भ्रष्टपाठ

यद्यपि, पार्जीटर २८ युगसम्बन्धी अंश की सही व्याख्या नहीं समझ पाया, परन्तु युग और मन्वन्तरसम्बन्धीगणना के सम्बन्ध में उसका यह कथन पूर्णसत्य है-

"It is unnecessary here to pursue this matter into latter fully developed theory of the Yugas and Manvantaras, wherein 71 four age periods (Chaturyuga) made up a Manvantara. (p. 178)

युगगणनासम्बन्धी भ्रान्ति के दो मूल कारण

प्राचीन मूल पुराणपाठों में स्वायम्भुव मनु के ७१ परिवर्तयुगो और वैवस्वत-मनु के २८ परिवर्तयुगों का उल्लेख पूर्णसत्यकथन था। ये दोनो अंक इस प्रकार के हैं कि वे मिथ्याकल्पना नहीं हो सकते, परन्तु **उत्तरकालीन पुराण प्रक्षेपकार और लिपिकर्त्ता 'परिवर्तयुग' के अर्थ और कालमान को भूल गये, अतः उन्होंने इस 'परिवर्तयुग' को मुख्यतः चतुर्युग समझ लिया, कहीं कहीं वर्तमान पुराणपाठों में इसी 'परिवर्तयुग' को त्रेता, द्वापर और कलियुग भी लिख मारा है। यही पुराणपाठत्रुटि पं० भगवद्दत्त की भ्रान्ति का कारण है तथा इसी त्रुटि से वर्तमान पुराणपाठों में 'मन्वन्तर' आदि का 'अयथार्थ कालमान' गढ़ा गया, जिसका इतिहास या सत्य से कोई सम्बन्ध नहीं।**

परिवर्तयुग के भ्रामकपाठों के उदाहरण

परिवर्तयुग का भ्रान्तनाम द्वापर

व्यासपरम्परा के सम्बन्ध में पुराणों में यह नाम बहुधा दुहराया गया है, क्योंकि अन्तिम व्यास -- कृष्णद्वैपायन ऐतिहासिक द्वापर के अन्त में हुये, अतः पूर्वव्यासों को भी द्वापरयुग मे रख दिया गया - -

अष्टाविंशतिकृत्वो वै वेदा व्यस्ता महर्षिभिः।
वैवस्वतेऽन्तरे तस्मिन् द्वापरेषु पुनः पुनः।
द्वापरे प्रथमे व्यस्तास्स्वयं वेदाः स्वयम्भुवा।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः ॥
(विष्णु० ३/३/६-१२)

इस पाठ की निरर्थकता इसी तथ्य से स्पष्ट हैं कि स्वयम्भू ब्रह्मा और प्रजापति कश्यप किसी द्वापरयुग में हुए ही नहीं, पुराणज्ञ इस बात को भली भांति समझते हैं।

परिवर्त का त्रेता नाम (भ्रामक)

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमेयुगे।

दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत् ॥
त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह ॥
एकोनविंशे त्रेतायां सर्वक्षत्रान्तकोऽभवत् ।
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरस्सरः ॥
चतुर्विंशे युगे रामो वसिष्ठेन पुरोधसा ॥
अष्टमे द्वापरे विष्णुरष्टाविंशे पराशरात् ॥

(वायुपुराण)

अन्तिम श्लोक में अट्ठाइसवें परिवर्तयुग को पुनः भ्रमवश 'द्वापर' कहा गया है।

युगनामभ्रान्ति के द्वितीय कारण के कथन से पूर्व परिवर्तयुगसम्बन्धी भ्रान्ति के एक तृतीय कारण का भी संकेत करेंगे। यह तृतीय कारण था कि महाभारतकाल से लगभग एक सहस्रवर्षपूर्व चतुर्युगगणना प्रचलित हो गई थी। उत्तरकाल में 'परिवर्तयुग' के ३६० मानुषवर्षों को देवताओं का एक वर्ष मानकर तथा उसकी संज्ञा 'दिव्यसवत्सर = (सौरसंवत्सर) होने से एक महती भ्रान्ति को जन्म दिया और 'परिवर्तयुग' का ऐतिहासिकमान प्रायः विस्मृत हो गया तथा चतुर्युग में ३६० का गुणा किया जाने लगा, जिससे चतुर्युग और परिवर्तयुग दोनों की ऐतिहासिकता नष्ट हो गई। और ७१ परिवर्तयुग के अंक को किस प्रकार चतुर्युग और स्वायम्भुव मनु के साथ जोड़ दिया गया, यह आगे स्पष्ट करेंगे।

परिवर्तयुग का भ्रामक नाम चतुर्युग

निम्नश्लोक मे परिवर्तयुग का अधूरा नाम प्रयुक्त हुआ है -

चतुर्विंशे युगे रामो वसिष्ठेन पुरोधसा।

शनैः शनैः विस्मृति के कारण युग (= परिवर्तयुग) को चतुर्युग समझ लिया गया। उदाहरणार्थ मरुत्त आवीक्षित, वैवस्वतमनु से एकादश परिवर्तयुग पश्चात् (३६० × ११ = ३९६० वर्ष) हुये, परन्तु वर्तमानपुराणपाठ में उसे एकादश चतुर्युग का एकादश द्वापर बना दिया गया —

चतुर्युगे त्वतिक्रान्ते मनोर्ह्येकादशे प्रभोः।
अथावशिष्टे तस्मिंस्तु द्वापरे संप्रवर्तिते।
मरुत्तस्य नरिष्यन्तस्तस्य पुत्रो दमः किल ॥

(ब्रह्माण्ड०)

जब यह भ्रान्ति दृढ़ हो गई तब चतुर्युग के १२००० वर्षों में परिवर्तयुग के ३६० वर्षों को दिव्यवर्ष मानकर उनमें परस्पर गुणा किया जाने लगा। मानुष (सौर) वर्ष को मूलपुराणपाठों में 'दिव्यवर्ष' और परिवर्तयुग को 'दिव्यसंवत्सरयुग' भी कहा गया था। परन्तु 'परिवर्तयुग' पाठ का उत्तरकाल में प्रायः लोप हो गया और 'दिव्यसंवत्सरयुग' (जो ३६० मानुषवर्षों का था), उसे 'दिव्यवर्ष' मान लिया गया। पुराण के निम्नपाठ में मूलतः दिव्यसंवत्सरयुग (= परिवर्तयुग = ३६० मानुषवर्ष) का स्पष्ट उल्लेख था—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि च।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः ॥ (ब्रह्माण्ड० १।७।१६)

यहां निश्चय ही 'दिव्यसंवत्सरयुग' का उल्लेख है, जैसा कि सप्तर्षियुग को 'सप्तर्षिवत्सर' और उसके 'मानुषवर्षों' को 'दिव्यवर्ष' भी कहा गया है —

सप्तर्षीणां युगंह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम् ॥
(वायु० ६६।४।६)

त्रीणि वर्ष सहस्राणि मानुषेण प्रमाणतः।
त्रिंशद्यानि तु मे मतः सप्तर्षिवत्सरः ॥
(ब्रह्माण्ड०)

अतः इस प्रसंग = ऐतिहासिकगणनासन्दर्भ में युग और संवत्सर तथा 'मानुष' और 'दिव्य' शब्द समानार्थक है, परन्तु उनको भिन्नार्थक समझने से ही भ्रान्ति उत्पन्न हुई।

प्राचीन पुराणपाठों में छः प्रकार के प्रकाश (दिव्य) युगों का वर्णन था—

१. पंचसंवत्सरात्मक युग = पंचवत्सर = ५ वर्ष।
२. षष्टिवत्सर = बार्हस्पत्ययुग = ६० वर्ष।
३. परिवर्तयुग = दिव्यसंवत्सर = ३६० वर्ष।
४. सप्तर्षियुग = सप्तर्षिवत्सर = २७०० या ३०३० वर्ष।
५. ध्रुवयुग = ध्रुवसंवत्सर = ६०६० वर्ष।
६. चतुर्युगसंवत्सर = देवयुग = १२०० मानुषवर्ष।

स्पष्ट है युग और संवत्सर शब्द समानार्थक थे, अतः इसी भ्रान्ति से चतुर्युग के १२००० मानुषवर्ष दिव्यवर्ष माने जाने लगे और उनमें ३६० (वर्ष) का गुणा किया जाने लगा, तब १२००० मानुष वर्षों के चतुर्युग को ४३ लाख २० सहस्र

वर्षों का 'काल्पनिकयुग' बना दिया गया। पुनः मन्वन्तर को ७१ 'चतुर्युग' का क्यों माना जाने लगा, यह आगे स्पष्ट करेंगे।

'परिवर्तनयुग' का भ्रामक नाम 'कलियुग'

वाक्य में अधूरे प्रयुक्त नाम से किस प्रकार भ्रान्तियाँ उत्पन्न होती हैं, इसका सर्वोत्तम उदाहरण 'परिवर्त' शब्द है। पुराणों के ही उत्तरकालीन प्रतिलिपिकर्ताओं ने उसे 'कलियुग' भी बना दिया—

तदाऽप्यहं भविष्यामि गंगाद्वारे कलेर्धुरि।
ततोऽप्यहं भविष्यामि अत्रिर्नाम युगान्तिके।
(वायु० २३।१४४)

वायुपुराण के माहेश्वरावतारयोगसंज्ञक २३वें अध्याय में प्रमुखरूप से २८ वेदव्यासों, और उनके शिष्यों का उल्लेख है। वहां पर 'मूलपरिवर्तयुग' शब्द को उत्तरकालीन वर्तमानपाठों में भ्रान्तिवश, 'कलि' 'द्वापर' 'त्रेता' और 'चतुर्युग' बना दिया है, तथापि मूलपाठ 'परिवर्तयुग' या 'पर्याययुग' ही अधिक सुरक्षित रह गया है——

ततस्तस्मिंस्तदा कल्पे वाराहे सप्तमे प्रभोः।
मनुर्वैवस्वतो नाम तव पुत्रो भविष्यति॥
तृतीये द्वापरे चैव यदा व्यासस्तु भार्गवः॥
चतुर्थे द्वापरे चैव यदा व्यासोऽगिराः स्मृत.।
पंचमे द्वापरे चैव व्यासस्तु सविता यदा।
परिवर्ते पुनः षष्ठे मृत्युर्व्यासो यदा प्रभुः।
सप्तमे परिवर्ते तु यदा व्यासः शतक्रतुः।
तदाऽप्यहं भविष्यामि कलौ तस्मिन् युगान्तिके।
जैगीषव्येति विख्यातः सर्वेषां योगिनां वरः॥
वसिष्ठश्चाष्टमे व्यासः परिवर्ते भविष्यति।
परिवर्तेऽथ नवमे व्यासः सारस्वतो यदा।
दशमे द्वापरे व्यासस्त्रिधामा नाम नामतः।
ततोऽप्यहं भविष्यामि, अत्रिर्नाम युगान्तिके।
त्रयोदशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमेण तु।

धर्मो नारायणो नाम व्यासस्तु भविता यदा ।
सुरक्षणो यदा व्यास पर्याये तु चतुर्दशे ।।
तत्रापि मम ते पुत्रा भविष्यन्ति कलौ युगे ।
ततः सप्तदशे चैव परिवर्ते क्रमागते ।
तदा भविष्यति व्यासो नाम्ना देवकृतंजयः ।
ततस्त्वेकोनविंशे तु परिवर्ते क्रमागते ।
व्यासस्तु भविता नाम्ना भरद्वाजो महामुनिः ।।
परिवर्ते तुत्रयोविंशे तृणाबिन्दुर्यदा मुनिः ।
व्यासो भविष्यति ब्रह्मा तदाऽहं भविता पुनः ।।
परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति ।
तदाऽहं भविता ब्रह्मा कलौ तस्मिन् युगान्तिके ।।
पंचविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते यथाक्रमम् ।
वासिष्ठस्तु यदा व्यासः शक्तिर्नाम भविष्यति ।।
षड्विंशे परिवर्ते तु यदा व्यासः पराशरः ।
सप्तविंशतितमे प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते ।
जातूकर्ण्यो यदा व्यासो भविष्यति तपोधनः ।।
अष्टाविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते ।
यदा भविष्यति व्यासो नाम्ना द्वैपायनः प्रभुः ।।

उपर्युक्त वायुपुराणपाठ में मूलपाठ पर्याप्त सुरक्षित है। ऐतिहासिक तथ्य प्रकट है कि क्रमशः प्रत्येक 'परिवर्तयुग' में एक 'व्यास' का प्रादुर्भाव हुआ, वही व्यास अपने-अपने युग का "राष्ट्रकवि" या महर्षि था। मूलयुग का नाम "परिवर्तयुग" ही था। शनैः शनैः पाठभ्रंशता उत्पन्न होने लगी और 'परिवर्तयुग' की संज्ञा कही 'द्वापर' कहीं 'कलि' और कही 'त्रेता' तथा 'चतुर्युग' बना दी गई। जब 'परिवर्तयुग' को 'चतुर्युग' बना दिया गया तो समस्त ऐतिहासिक गणना काल्पनिक बन गई।

उपर्युक्त वायुपुराण सन्दर्भ से स्पष्ट है कि परस्परव्यासो में लाखों या करोड़ोंवर्षों का अन्तर नहीं था, न ही उनके मध्य में कोई कृतयुग, त्रेता या द्वापर या कलियुग थे। प्रत्येक 'व्यास' अपने 'पूर्वव्यास' का शिष्य था। निश्चय ही उनकी आयु दीर्घ थी – अनेक शताब्दियाँ, वह आयु लाखों या करोड़ों वर्षों की नहीं थी। उदाहरणार्थ चतुर्थव्यास बृहस्पति आंगिरस, तृतीयव्यास उशना, भार्गव (शुक्राचार्य)

के शिष्य थे। पंचम व्यास—विवस्वान्, चतुर्थ व्यास बृहस्पति के शिष्य थे। षष्ठ व्यास वैवस्वत यम—अपने पिता विवस्वान्—पंचम व्यास के शिष्य थे। सप्तम व्यास शतक्रतुइन्द्र, षष्ठ व्यास वैवस्वतयम के शिष्य थे। यही परम्परा २८ युग (परिवर्तयुग) पर्यन्त कृष्णद्वैपायन व्यास तक चलती रही और व्यास पीढीदर पीढी होते रहे। अतः गुरुशिष्य या पिता-पुत्र में चतुर्युग (१२००० वर्ष या ४३२०००० वर्षों) का अन्तर मानना कितनी भ्रष्ट, धृष्ट एवं असत्य कल्पना है, इसको कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति सोच सकता है।

अतः प्रत्येक व्यास एक परिवर्तयुग (३६० मानुषवर्ष) में हुआ न कि चतुर्युग में, जैसी कि वर्तमान पुराणपाठों से मिथ्याधारणा बनती है। प्रजापति कश्यप या उनके पौत्र वैवस्वतमनु से पाराशर्यव्यास तक २८ परिवर्तयुग (३६०×२८= १००८० वर्ष) व्यतीत हुये।

एकसप्ततिपरिवर्तयुग और स्वायम्भव मनु का समय

परिवर्त या परिवृत्त ? (पाठत्रुटि)

यह परिवर्तयुगगणना स्वायम्भुव मनु से आरम्भ हुई थी, न कि वैवस्वतमनु से। यह ध्यातव्य है कि मूलपाठ 'परिवर्त' था, उसको उत्तरकाल में 'परिवृत्त' बना दिया गया, यथा, पुराणपाठ द्रष्टव्य है—

स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते॥ (ब्रह्माण्ड० १/२/६)

यह मूलपाठ सही माना जा सकता है, परन्तु 'परिवर्तयुग' को केवल 'युग' कह देने से अन्य पाठों में उसे चतुर्युग बना दिया गया—

एषां चतुर्युगानां तु गणना ह्येकसप्ततिः। (वायु० ५८/११५)

इस श्लोक के साथ (वर्तमानपाठों में) 'परिवर्त' का अशुद्ध पाठ 'परिवृत्त' भी मिलता है—

क्रमेण परिवृत्तास्तु मनोरन्तरमुच्यते॥ (वायु० ५८/११५)
परिवृत्ते युगे तस्मिंस्ततस्ताभिः प्रणश्यति॥
एषां चतुर्युगानां च गुणिता ह्येकसप्ततिः।
क्रमेण परिवृत्तास्तु मनोरन्तरमुच्यते॥ (ब्रह्माण्ड० १/२/३२/११६)

लेकिन मूलपाठ 'परिवर्त' ही था' इसके साथ (आगे के) श्लोकों से भी यह सिद्ध है—

यथा युगानां परिवर्तनानि।
चिरप्रवृत्तानि युगस्वभावात् ॥
तथा न संतिष्ठति जीवलोकः।
क्षयोदयाभ्यां परिवर्तमानः ॥ (ब्रह्माण्ड० १/२/३२/१२०)

सभी प्रकार विचार करने से स्पष्ट और सिद्ध होता है कि मूलपाठ 'एकसप्ततिपरिवर्तयुग' ही था, उसको पूर्वोक्त कारणों, भ्रमों से 'एकसप्ततिचतुर्युग' कल्पित किया गया। निश्चय ही स्वायम्भुवमनु से पाराशर्यव्यासपर्यन्त ७१ परि-युग (३६०×७१ = २५५६०) या छब्बीस सहस्र मानुषवर्ष व्यतीत हुए थे, यह अंक ब्रह्माण्डपुराण (१/२/२६/१६) के निम्नपाठ में सुरक्षित रह गया है—

"षड्विंशतिसहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु ॥"

प्राचीनमूलपुराणपाठों में ऐतिहासिकगणना मानुषवर्षों में ही थी, जैसाकि वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण मे 'मानुषवर्ष' शब्द को बारम्बार दुहराया गया है।

ब्रह्माण्डपुराण (१/२/३५/७३) के अनुसार स्वायम्भुवमनु से भगवान् प्रभु कृष्णद्वैपायनव्यासपर्यन्त ७१ परिवर्तयुग व्यतीत हुए थे। वैवस्वतमनु से पाराशर्य-व्यासतक २८ परिवर्तयुग व्यतीत हुये थे। और स्वायम्भुवमनु तथा वैवस्वत मनु में ४३ परिवर्तयुगों का अन्तर था अर्थात् लगभग सोलहसहस्रवर्ष। अतः स्वायम्भुवमनु अब से लगभग ३१ या ३२ सहस्रवर्षपूर्व हुये। पुरानी बाइ-बिल में उल्लिखित स्वायम्भुव मनु (आत्मभू=आदम) और मनुवैवस्वत (नूह) की आयु सत्यप्रतीत होती है, तदनुसार आदम ९३० वर्ष जीवित रहा—And all the days that Adam lived were nine hundred and thirty years.

(Holy Bible. p. 9)

नूह (मनु वैवस्वत) की आयु ९५० वर्ष थी—"And all the days of Nooh were nine hundred and fifty years. And he died."

(Holy Bible, p. 13)

बाइबिल के प्रमाण से भी सिद्ध है कि चौदह मनुओं में परस्पर तीस-तीस करोड़ वर्षों का अन्तर नहीं था, जैसा कि वर्तमान अनेकपुराणपाठो में यह भ्रान्ति विद्यमान है और इसको पोंगापन्थी एवं कुछ तथाकथितवैज्ञानिक मानते हैं और उक्त पुराणप्रमाण से पृथिवी को आयु दो अरब वर्ष बताते हैं। यह सब उक्त भ्रान्तिमय मन्वन्तरगणना का परिणाम है। स्वायम्भुव मनु का समय हमने पुराणप्रकरण से ऊपर बता दिया, अब अन्य मनुओं का समय निर्दिष्ट करते हैं।

चतुर्युग और परिवर्तयुगकालगणना का सामंजस्य

स्वल्प व्यवधान के साथ परिवर्तयुगगणना का चतुर्युगगणना से सामंजस्य बिठाया जा सकता है। यहां पर हम वैवस्वतमन्वन्तर के २८ परिवर्तयुगो का चतुर्युग गणना से सामंजस्य स्थापित करेंगे।

हम, पुराणपाठो से पहिले ही सिद्ध कर चुके हैं कि जिस प्रकार बृहस्पतियुग को षष्टिवत्सर, सप्तर्षियुग को सप्तर्षिवत्सर, और ध्रुवयुग (=६०६० वर्ष) को 'ध्रुवसंवत्सर' कहा जाता था उसी प्रकार 'परिवर्तयुग' को 'दिव्यसंवत्सर' (सौरयुग) कहा जाता था, इस प्रकार 'परिवर्तयुग' का वर्षमान था——३६० मानुषवर्ष——

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः ॥ (ब्रह्माण्ड०)

'परिवर्तयुग' को दिव्यसंवत्सर' कहने से ही महती भ्रान्तियां उत्पन्न हुई, जिनका विवेचन हम पूर्वपृष्ठों पर कर चुके हैं। इस भ्रान्ति के कारण परस्पर गुरु-शिष्यों या पितापुत्रों में एक चतुर्युग (४३२०००० वर्ष) का अन्तर कल्पित किया गया, जैसा कि शुक्राचार्य—बृहस्पति और जातूकर्ण्य —कृष्णद्वैपायन आदि व्यासों के उदाहरणो से स्पष्ट है। वैवस्वत मनु से पराशर्यव्यास (महाभारतकाल) तक २८ युग (परिवर्तयुग)--१००८० वर्ष व्यतीत हुये थे, जिसको भ्रान्तिवश २८ चतुर्युग माना गया——

अष्टाविंशयुगाख्यास्तु गता वैवस्वतेऽन्तरे।
(वायुपुराण ३७/४५३)

अन्य प्रमाणो से भी ज्ञात होता है कि नहुष (जो मनु की पाचवी पीढ़ी में हुआ) से युधिष्ठिरपर्यन्त केवल दशसहस्रवर्ष व्यतीत हुये थे—

दशवर्षसहस्राणि सर्परूपधरो महान्।
विचरिष्यसि पूर्णेषु पुनः स्वर्गमवाप्स्यसि ॥
(उद्योगपर्व १७/१५)

अतः चतुर्युग केवल १२००० (द्वादशसहस्र) मानुषवर्षो के थे। चतुर्युग का प्राचीनतम उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है—

"शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे
त्रीणि चत्वारि कृण्मः। (८/२/२१)

मूल में चतुर्युग १०००० (दशसहस्र) वर्ष के ही थे, परन्तु उत्तरकाल में उनमें सन्धिकाल (२००० वर्ष) जोड़कर उन्हें १२००० वर्षों का माना जाने लगा—

चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां च कृतंयुगम् ।
तस्य तावच्छती संध्या संध्यांशं संध्यासम· ।
इतरेषु ससंध्येषु ससंध्यांशेषु च त्रिषु ।
एकापायेन वर्तन्ते सहस्राणि शतानि च ।
तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता ।।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः ।।
(ब्रह्माण्ड० १/२/२६/२०-३०)

चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत्कृत युगम् ।
तथा त्रीणि सहस्राणि त्रेतायां मनुजाधिप ।
द्विसहस्रं द्वापरे तु शतं तिष्ठति सम्प्रति ।।
(भीष्मपर्व)

ब्रह्माण्डपुराण के वर्तमानपाठ में भी चतुर्युग के द्वादशसहस्रवर्षों को स्पष्ट ही मानुषवर्ष कहा गया है—

तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता ।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम् ।
अत्र संवत्सराः सृष्टा "मानुषेण" प्रमाणतः ।।
(ब्रह्माण्ड० १/२/२६/१८)

चतुर्युग के द्वादशसहस्रवर्ष मानुषवर्ष ही थे, इसका अकाट्य प्रमाण है, वायुपुराण का वह उल्लेख, जिसमें कहा गया है कि जिस प्रकार वेद चतुष्पाद है, युग चतुष्पाद है, उसी प्रकार पुराण चतुष्पाद है तथा पुराण (वायुपुराण) में १२००० श्लोक हैं उसी प्रकार चतुष्पादयुग में १२००० मानुषवर्ष होते है—

एवं द्वादशसाहस्रं पुराणं कवयो विदुः ।
यथा वेदश्चतुष्पादश्चतुष्पादं यथा युगम् ।
चतुष्पादं पुराणं तु ब्रह्मणा विहितं पुरा ।।

ऋग्वेद में प्रजापति (कश्यप) रचित द्वादशसहस्र ऋचायें थीं तथा अग्निचयन प्रतियज्ञ में इतनी ही इष्टकायें रखी जाती थीं——

द्वादश बृहती सहस्राणि एतावत्यो ह्यर्चा याः
प्रजापतिसृष्टाः।" (शतपथब्राह्मण १०/४/२/२३)

प्राचीन यूनानी इतिहासकार हैरोडोट्स ने भी लिखा है कि मिस्री इतिहास के अनुसार मनु से सैथोस (हैरोडोटसकालिक) तक केवल ११३९० वर्ष व्यतीत हुये थे—The priests told Herodotus that there had been 391 generations both of kings and High priests from Manos (=मनु) to Sethos and this he calculates at 11390 years. (*The Ancient History of East* by P. Smith, p. 59).

अतः लोकमान्यतिलक ने ठीक ही लिखा—"In other words, Manu and Vyasa, obviously speak of a period of 10000 or including the Sandhyas of 12000 ordinary or human (not divine) years; from the beginning of Krita to the end of Kaliage, and it is remarkable that in the Atharvaveda, we should find a period of 10000 years apparently assigned to one Yuga (*The Arctic Home in the Vedas*. p. 350).

पारसीपरम्परा में भी चारयुग बारहसहस्रवर्ष के ही मान्य थे।

मैक्सिको की प्राचीन मयसभ्यता में प्रथमयुग (कृतयुग) ४८०० वर्षों का माना जाता था।

वैवस्वतमनु का समय

परिवर्तयुगगणना से वैवस्वतमनु का समय आज से लगभग १५ हजारवर्ष पूर्व और महाभारतयुद्धकाल से दशसहस्रवर्षपूर्व निश्चित होता है। (२८ परिवर्त युग × ३६०=१००८० वर्ष) अतः परिवर्तयुगगणना तथा चतुर्युगकालगणना में पूर्ण सामंजस्य बैठ जाता है।

प्राचीनघटनाक्रम—परिवर्तयुग में उल्लिखित

पुरातन मौलिकपुराणों में प्राचीनतम (प्राग्महाभारतीय) घटनाक्रम परिवर्त युगों में ही उल्लिखित होता था। इस समय केवल वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण के प्राचीन अंशों में, केवल निदर्शनरूप में ही परिवर्तयुगों का उल्लेख अवशिष्ट रह गया है। इनमें सर्वाधिक विस्तृत निदर्शन वायुपुराण २३वें अध्याय मे है जहां माहेश्वरावतारयोग के सन्दर्भ में व्यासपरम्परा का वर्णन है और २८ परिवर्तयुगों के कुछ प्रमुख व्यक्तियों के नाम उल्लिखित हैं। अन्यत्र, ब्रह्माण्डपुराण के निदर्शन द्रष्टव्य हैं, यथा

हिरण्यकशिपु आदिदैत्य सम्राट् का नृसिंह द्वारा वध चतुर्थयुग (परिवर्तयुग) में हुआ—

चतुर्थ्यां तु युगाख्यामापन्नेषु सुरेष्वथ ।
संभूतः स समुद्रान्ते हिरण्यकशिपोर्वधे ।।
(ब्रह्माण्ड० २/३/७३/७३)

चरकसंहिता के अनुसार प्रजापति दक्ष और रुद्र का संघर्ष द्वितीय परिवर्तयुग में हुआ था—

द्वितीये हि युगे शर्वमक्रोधमास्थितम् ।
पश्यन् समर्थश्चोपेक्षां चक्रे दक्षः प्रजापतिः ।।
(च. सं. ३।१५,१६)

पुराणो के अनुसार दैत्यासुरों का साम्राज्य एवं प्रभाव दशयुग (परिवर्तयुग) पर्यन्त (३६० × १० = ३६०० = १४००० वि. पू. से १०४०० विक्रमपूर्व तक) रहा—

युगाख्या दश सम्पूर्णा ह्यासीदव्याहतं जगत् ।
दैत्यसंस्थमिदं सर्वमासीद् दशयुग किल ।
अशपत्तु ततः शक्रो राष्ट्रं दशयुग पुनः ।।
युगाख्या दश सम्पूर्णा देवानाक्रम्य मूर्धनि ।।
(ब्रह्माण्डपुराण)

असुरसाम्राज्य वृषपर्वादानवेन्द्र के समयतक प्रायः अक्षुण्ण रहा, जब इन्द्र ने अपनी पुत्री जयन्ती का विवाह वृद्ध आचार्य शुक्र उशना (असुरपुरोहित) से कर दिया । जयन्ती की पुत्री देवयानी का विवाह ययाति नाहुष के साथ हुआ और वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा भी ययाति की पत्नी थी । यह समय महाभारतकाल से लगभग नौ सहस्रवर्षपूर्व (या १२००० विक्रमपूर्व) था, यद्यपि इन्द्र का प्रभाव इससे एक युग पूर्व—सप्तम परिवर्तयुग में बढ़ चुका था—

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे ।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत् ।।
(वायुपुराण)

इसी प्रकार, पुराणों में दत्तात्रेय का समय दशम परिवर्त में, मान्धाता का पन्द्रहवें परिवर्त में, परशुराम का उन्नीसवें परिवर्त में, दाशरथि राम का चौबीसवें परिवर्त में और कृष्ण वासुदेव का अट्ठाईसवें परिवर्त में निर्दिष्ट है ।

अत 'परिवर्तयुग' की खोज प्राचीन इतिहास की अतिमहत्वपूर्ण मौलिक खोज है, जिससे महाभारतपूर्व के महापुरुषो का समय सरलता से निश्चित किया जा सकता है।

अतः पुराणों में १४ मनुओं के इतिहास का सार निम्न तालिका से प्रकट होगा :—

क. सं	मनु	सप्तर्षिगण	पुत्रगण	इन्द्र, देवगण,	समय तिथि
१	स्वायम्भुव मनु	मरीचि, अत्रि अङ्गिरा, पुलह क्रतु, पुलस्त्य और वसिष्ठ	आग्नीध्र, अग्निबाहु, मेधा, मेधातिथि, वसु, ज्योतिष्मान, द्युतिमान् हव्य, और सवन	यामा देवगण	३०००० वि० पू०
२	स्वारोचिष मनु	और्व वासिष्ठ, स्तम्भ कश्यप, प्राण भार्गव, ऋषभ अङ्गिरा दत्त पौलस्त्य निश्चल आत्रेय अर्वरीयान् - पौलह।	चैत्र, किंपुरुष कृतान्त, विभृत रवि, नव, सेतु बृहदुक्थ, और क्रतु	तुषित- पारावत वासिष्ठसंज्ञ कदेवगण इन्द्र विपश्चिद्	२९००० वि० पू०
३	उत्तममनु (औत्तमि)	हिरण्यगर्भ वासिष्ठ के सात पुत्र-सप्तर्षि,	इष, ऊर्ज, तनूज, मधु माधव, शुचि, शुक्र, सह, नभस्य, नभ	देवों के पंचगण सुधर्मा, प्रतर्दन शिव,सत्य और सुकर्मा इन्द्र-सुशान्ति	२९००० वि० पू०
४	तामस मनु	काव्यआङ्गिरस पृथु काश्यप, अग्नि आत्रेय	जानुजंघ शान्ति, नर	सत्य, सुरूप सुधी और	२८००० वि० पू०

क्र. सं	तामसमनु	सप्तर्षिगण	पुत्रगण	इन्द्रादिदेवगण	तिथि
४		ज्योतिर्धाम भार्गव, चरक पौलह, पीवर वासिष्ठ, और चैत्र पौलस्त्य देवबाहुपौलह	ख्याति, शुभ प्रियभृत्य, परीक्षित्, प्रस्थल दृढेषुधि, कृशाश्व और कृतबन्धु	हरिगण (पौलस्त्य) इन्द्र शिबि	
५	रैवतमनु	सुधामा काश्यप हिरण्यरोमाआंगरस,वेदश्रीभार्गव ऊर्ध्वबाहुवासिष्ठ पर्जन्यपौलह और सत्यनेत्र आत्रेय उत्तम भार्गव	महावीर्य, सुसंभाव्य, सत्यक,हरहा शुचि बलवान् निरामित्र कम्बु ,शृंग और धृतव्रत उरु, पुरु,	अमिताभ, भूताय वैकुण्ठ, सुमेधस वरिष्ठ, इन्द्रविभु	२६००० वि० पू०
६	चाक्षुषमनु	हविष्मान् आङ्गिरस सुधामा काश्यप विरजा वासिष्ठ अतिनामपौलस्त्य सहिष्णु पौलह और मधु आत्रेय	शतद्युम्न, तपस्वी, सत्यवाक्, कृति, अग्नि ऋत, अति रात्र, सुद्युम्न और अभिमन्यु (सभी नड्वला के पुत्र)	आद्य, प्रसूत, भाव्य पृथुक, महानुभाव और लेखासंज्ञक देवगण, (आरण्य आत्रेय के पुत्र) महावीर्य इन्द्र	१८००० वि० पू० १६००० पर्यन्त
७	रौच्य धृतिमान् मनु (कर्दम)	आंगिरस, हव्यप पौलस्त्य तत्वदर्शी पौलह निरुत्सुक भार्गव निष्प्रकम्प	चित्रसेन, विचित्र, नय, धर्मभृत, धृत, सुनेत्र, क्षत्र,	सुत्रामा, सुधर्मा और सुकर्मा-तीन प्रकार के देवगण	२६००० वि० पू०

क्र. सं.		सप्तर्षिगण	पुत्रगण	इन्द्रादिदेवगण	तिथि
८	भौत्यमनु	आत्रेय निर्मोह काश्यप सुतपा वासिष्ठ आग्नीध्र काश्यप मागध पौलस्त्य अग्निबाहु भार्गव शुचि आंगिरस सबल पौलस्त्य मेधातिथि, धृष्ट- केतु पौलस्त्य	वृद्धि, सुतपा निर्भय और दृढ़, तरंगभीरुवप्र, तरस्वान्, उग्र अभिमानी, जिष्णु संक्रन्दन, तेजस्वी	इन्द्र-दिवस्पति पंचदेवगण— चाक्षुष, कानिष्ठ, पवित्र, भाजर और वाचावृद्ध देवों के द्वादश	२५००० वि० पू०
९	मेरुसावर्णी (रोहित दाक्षायण)	पंचहोत्र निराकृति पृथुश्रवा, भूरिधामा, ऋचीक अष्टहत और गय	वसु काश्यप ज्योतिस्मान् भार्गव द्युतिमान आंगिरस सावन वासिष्ठ हव्यवाहन आत्रेय और सप्त पौलह सप्तर्षि	गण—मरीचि, सुशर्मा इत्यादि इन्द्र—स्कन्द कार्तिकेय (अद्भुत)	१४००० वि० पू०
१०	दक्षसावर्णि मनु	हविष्मान पौलह, सुकृति भार्गव, आपोमूर्ति आत्रेय अष्टम वासिष्ठ प्रमिति पौलस्त्य नभोग काश्यप और सत्य आङ्गिरस	सुक्षत्र, उत्तम, भूरिषेण शतानीक, निरमित्र, वृषसेन, जयद्रथ, सुवर्चा और भूरिद्युम्न	सुधमना और निरुद्ध—दो प्रकारके देवगण इन्द्र—शान्ति,	१४००० वि० पू०
११	रुद्र (रौद्र) सावर्णी	हविष्मान काश्यप हविष्मान् भार्गव तरुण आत्रेय, अनघ वासिष्ठ उदधिष्ण्य आंगिरस निश्चर पौलस्त्य और अग्नितेजा पौलह	संवर्तक, सुशर्मा देवानीक, पुरूद्वह क्षेमधन्वा, आदर्श पण्डक और मनु	तीन प्रकार के देवगण और इन्द्र—'वृष'	१४००० वि० पू०

क्र. सं.	मनु	सप्तर्षिगण	पुत्रगण	इन्द्रदेवगण	तिथि
१२	ब्रह्मसावर्णि (कश्यप-मारीच)	कृति वासिष्ठ, सुतपा आत्रेय, तपोमूर्ति आंगिरस, तपस्वी काश्यप, तपोअशयान पौलस्त्य, तपोरति पौलह और तपोमति भार्गव	देववान्, उपदेव देवश्रेष्ठ, विदूरथ. मित्रवान् मित्रविन्दु मित्रसेन, अमित्रहा, मित्रबाहु और सुवर्चा	पंचदेवगण-हरित, रोहित, सुमनस, सुकर्मा और सुपार इन्द्र-ऋतधामा	१५००० वि० पू० १३००० वि० पू०
१३	वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव)	वसुमान् वासिष्ठ दत्तआत्रेय, काश्यप वत्सार गौतम, भरद्वाज जमदग्नि और विश्वामित्र	इक्ष्वाकु, शर्याति नरिष्यन्त प्राशु, करूष, धृष्णु पृषध्र नभग नाभानेदिष्ट और इला (कन्या)	देवगण-साध्य, रुद्र, मरुदगण, वसुगण और आदित्य गण, इन्द्र शतक्रतु,	१३००० वि० पू० से ११००० वि० पू० तक
१४	वैवस्वत सावर्णमनु	गालव कौशिक, परशुराम भार्गव, पराशर या पाराशर्य, शारद्वत (गौतम) दीप्तिमान् आत्रेय ऋष्यशृंग काश्यप और भारद्वाज—(अज्ञातनामा, अश्वत्थामा, कृप, और द्वैपायन के भ्रष्टपाठ-भ्रामक)	वरीयान् अवरीयान् सम्मत धृतिमान्, वसु चरिष्णु, अध्रष्णु, वाज और सुमति	सुतपा, अमिताभ, और सुखमंज्ञक तीन गण, इन्द्र दैत्येन्द्र बलि वैरोचन	१३००० वि० पू० से ११००० वि० पू० तक; सप्तर्षियों का समय (अष्टादश परिवर्त) ६५०० वि०पू० से ६००० वि० पू० तक